कुण्डलिनी विज्ञान

एक आध्यात्मिक मनोविज्ञान

पुस्तक-4

मानव मन एक उड़ती पतंग की तरह है

कुण्डलिनी योग विज्ञान ब्लैक होल में भी झाँक सकता है

कुण्डलिनी विज्ञान

एक आध्यात्मिक मनोविज्ञान-4

लेखक- प्रेमयोगी वज्र

2023

पुस्तक परिचय

यह पुस्तक कुण्डलिनी विज्ञान शृंखला का चौथा भाग (पुस्तक-4) है। इसका पहला, दूसरा (पुस्तक-2), और तीसरा भाग (पुस्तक-3) भी समान प्लेटफोरमों पर उपलब्ध है। यह ब्लॉग-पोस्टों का संकलित रूप है। इन पोस्टों को प्रेमयोगी वज्र ने लिखा है, जो एक रहस्यवादी योगी हैं। वह प्रबुद्ध है और साथ ही उसकी कुंडलिनी भी जागृत है। ये सभी पोस्टें कुंडलिनी से संबंधित हैं। एक पोस्ट एक अध्याय से मेल खाती है। प्रेमयोगी वज्र 4 साल पहले से, तब से कुंडलिनी के बारे में लिख रहे हैं, जब उनकी कुंडलिनी एक साल के लंबे कुंडलिनी योग ध्यान के बाद जागृत हुई थी। पुस्तक को वर्तमान तिथि तक कुंडलिनी विचारों या पोस्टों के साथ अद्यतन या अपडेट किया गया है। वह यह देखकर चकित हो गया कि कहीं भी कुंडलिनी का उल्लेख या वर्णन पूरी तरह से नहीं किया गया है। यहां तक कि कुंडलिनी को ठीक से परिभाषित भी नहीं किया गया था। उन्होंने कुंडलिनी जागरण के कई अनुभवों को खोजा और पढ़ा, लेकिन उन्हें वास्तविक और पूर्ण रूप में कोई नहीं मिला। यद्यपि उन्होंने पतंजलि योग सूत्र में कुंडलिनी के समतुल्य समाधि का उल्लेख पाया है, लेकिन इसका रहस्यवादी और प्राचीन तरीके से वर्णन किया गया है, जिसे आम जनता के लिए समझा जाना मुश्किल है। इसलिए इन कमियों से प्रेरित होकर, उन्होंने कुण्डलिनी से सम्बंधित हर चीज को जमीनी स्तर पर, सत्य, अनुभवात्मक, वैज्ञानिक, मूल, व्यावहारिक और सहज ज्ञान युक्त रखने के लिए बहुत सरल या बचकाने तरीके से कुंडलिनी के बारे में समझने और लिखने का फैसला किया। इस अद्भुत पुस्तक की उत्पत्ति के परिणामस्वरूप रहस्यात्मक कुण्डलिनी की लिए वास्तविक, ईमानदार और मानवीय प्रयास हुआ। इसीलिए यह पुस्तक कुण्डलिनी साधकों के लिए वरदान के रूप में प्रतीत होती है। चूँकि चकाचौंध पैदा करने वाली स्क्रीनों पर एक साथ इतने सारे ब्लॉग पोस्टों को पढ़ना सहज नहीं है, इसलिए उन पोस्टों को एक किंडल ई-बुक के रूप में प्रस्तुत किया गया, जो पढ़ने में आरामदायक और आनंददायक है। नतीजतन, यह पूरी तरह से आशा की जाती है कि पाठकों को यह पुस्तक आध्यात्मिक रूप से उत्थान करने वाली, सत्य की खोज करने वाली, और अत्यधिक आनंद देने वाली लगेगी।

लेखक परिचय

प्रेमयोगी वज्र का जन्म वर्ष 1975 में भारत के हिमाचल प्रान्त की एक सुन्दर व कटोरानुमा घाटी में बसे एक छोटे से गाँव में हुआ था। वह स्वाभाविक रूप से लेखन, दर्शन, आध्यात्मिकता, योग, लोक-व्यवहार, व्यावहारिक विज्ञान और पर्यटन के शौक़ीन हैं। उन्होंने पशुपालन व पशु चिकित्सा के क्षेत्र में भी प्रशंसनीय काम किया है। वह पोलीहाऊस खेती, जैविक खेती, वैज्ञानिक और पानी की बचत युक्त सिंचाई, वर्षाजल संग्रहण, किचन गार्डनिंग, गाय पालन, वर्मीकम्पोस्टिंग, वैबसाईट डिवेलपमेंट, स्वयंप्रकाशन, संगीत (विशेषतः बांसुरी वादन) और गायन के भी शौक़ीन हैं। लगभग इन सभी विषयों पर उन्होंने दस के करीब पुस्तकें भी लिखी हैं, जिनका वर्णन एमाजोन ऑथर सेन्ट्रल, ऑथर पेज, प्रेमयोगी वज्र पर उपलब्ध है। इन पुस्तकों का वर्णन उनकी निजी वैबसाईट **demystifyingkundalini.com** पर भी उपलब्ध है। वे थोड़े समय के लिए एक वैदिक पुजारी भी रहे थे, जब वे लोगों के घरों में अपने वैदिक पुरोहित दादा जी की सहायता से धार्मिक अनुष्ठान किया करते थे। उन्हें कुछ उन्नत आध्यात्मिक अनुभव (आत्मज्ञान और कुण्डलिनी जागरण) प्राप्त हुए हैं। उनके अनोखे अनुभवों सहित उनकी आत्मकथा विशेष रूप से "शरीरविज्ञान दर्शन- एक आधुनिक कुण्डलिनी तंत्र (एक योगी की प्रेमकथा)" पुस्तक में साझा की गई है। यह पुस्तक उनके जीवन की सबसे प्रमुख और महत्त्वाकांक्षी पुस्तक है। इस पुस्तक में उनके जीवन के सबसे महत्त्वपूर्ण 25 सालों का जीवन दर्शन समाया हुआ है। इस पुस्तक के लिए उन्होंने बहुत मेहनत की है। एमाजोन डॉट इन पर एक गुणवत्तापूर्ण व निष्पक्षतापूर्ण समीक्षा में इस पुस्तक को पांच सितारा, सर्वश्रेष्ठ, सबके द्वारा अवश्य पढ़ी जाने योग्य व अति उत्तम (एक्सेलेंट) पुस्तक के रूप में समीक्षित किया गया है। गूगल प्ले बुक की समीक्षा में भी इस पुस्तक को फाईव स्टार मिले थे, और इस पुस्तक को अच्छा (कूल) व गुणवत्तापूर्ण आंका गया था। इस पुस्तक का अंग्रेजी में मिलान "Love story of a Yogi- what Patanjali says" पुस्तक है। प्रेमयोगी वज्र एक रहस्यमयी व्यक्ति है। वह एक बहुरूपिए की तरह है, जिसका अपना कोई निर्धारित रूप नहीं होता। उसका वास्तविक रूप उसके मन में लग रही समाधि के आकार-प्रकार पर निर्भर करता है, बाहर से वह चाहे कैसा भी दिखे। वह आत्मज्ञानी (एनलाईटनड) भी है, और उसकी कुण्डलिनी भी जागृत हो चुकी है। उसे आत्मज्ञान की अनुभूति प्राकृतिक रूप से / प्रेमयोग से हुई थी, और कुण्डलिनी जागरण की अनुभूति कृत्रिम रूप से / कुण्डलिनी योग से हुई। प्राकृतिक समाधि के समय उसे सांकेतिक व समवाही तंत्रयोग की सहायता मिली, जबकि कृत्रिम समाधि के समय पूर्ण व विषमवाही तंत्रयोग की सहायता उसे उसके अपने प्रयासों के अधिकाँश योगदान से प्राप्त हुई।

अधिक जानकारी के लिए, कृपया निम्नांकित स्थान पर देखें-

https://demystifyingkundalini.com/

©2023 प्रेमयोगी वज्र। सर्वाधिकार सुरक्षित।

वैधानिक टिप्पणी (लीगल डिस्क्लेमर)

इस तंत्र-सम्मत पुस्तक को किसी पूर्वनिर्मित साहित्यिक रचना की नक़ल करके नहीं बनाया गया है। फिर भी यदि यह किसी पूर्वनिर्मित रचना से समानता रखती है, तो यह केवल मात्र एक संयोग ही है। इसे किसी भी दूसरी धारणाओं को ठेस पहुंचाने के लिए नहीं बनाया गया है। पाठक इसको पढ़ने से उत्पन्न ऐसी-वैसी परिस्थिति के लिए स्वयं जिम्मेदार होंगे। हम वकील नहीं हैं। यह पुस्तक व इसमें लिखी गई जानकारियाँ केवल शिक्षा के प्रचार के नाते प्रदान की गई हैं, और आपके न्यायिक सलाहकार द्वारा प्रदत्त किसी भी वैधानिक सलाह का स्थान नहीं ले सकतीं। छपाई के समय इस बात का पूरा ध्यान रखा गया है कि इस पुस्तक में दी गई सभी जानकारियाँ सही हों व पाठकों के लिए उपयोगी हों, फिर भी यह बहुत गहरा प्रयास नहीं है। इसलिए इससे किसी प्रकार की हानि होने पर पुस्तक-प्रस्तुतिकर्ता अपनी जिम्मेदारी व जवाबदेही को पूर्णतया अस्वीकार करते हैं। पाठकगण अपनी पसंद, काम व उनके परिणामों के लिए स्वयं जिम्मेदार हैं। उन्हें इससे सम्बंधित किसी प्रकार का संदेह होने पर अपने न्यायिक-सलाहकार से संपर्क करना चाहिए।

कुंडलिनी योग दर्शन को दर्शाती कार्टून फ़िल्म राया एंड द लास्ट ड्रेगन

सभी को श्री गुरु नानकदेव के प्रकाश पर्व पर हार्दिक शुभकामनाएं

दोस्तों, मैं पिछली पोस्टों में ड्रेगन के कुंडलिनी प्रभावों के बारे में बात कर रहा था। इसी कड़ी में मुझे एनीमेशन मूवी राया एंड द लास्ट ड्रेगन देखने का मौका मिला। इसमें मुझे एक सम्पूर्ण योगदर्शन नजर आया। अब यह पता नहीं कि क्या इस फ़िल्म को बनाते समय योगदर्शन की भी किसी न किसी रूप में मदद ली गई या मुझे ही इसमें नजर आया है। जहाँ तक मैंने गूगल पर सर्च किया तो पता चला कि दक्षिण पूर्वी एशियाई (थाईलैंड आदि देश) जनजीवन से इसके लिए प्रेरणा ली गई है, किसी योग वगैरह से नहीं। थाईलैंड में वैसे भी योग काफी लोकप्रिय हो गया है। इसमें एक ड्रेगन शेप की नदी या दुनिया होती है। उसमें एक हर्ट नामक कुमान्द्रा लैंड होती है। वहाँ सब मिलजुल कर रहते हैं। हर जगह ड्रेगन्स का बोलबाला होता है। ड्रेगन सबको ड्रन अर्थात बवंडर नामक पापी राक्षस से बचाती है। ड्रन लोगों की आत्मा को चूसकर उन्हें निर्जीव पत्थर बना देते हैं। ड्रेगन उन ड्रन राक्षसों से लड़ते हुए नष्ट हो जाती हैं। फिर पांच सौ साल बाद वे ड्रन फिर से हमला कर देते हैं। हर्ट लैंड के पास ड्रेगन का बनाया हुआ रत्न होता है, जो ड्रन से बचाता है। वह पत्थर बने आदमी को तो जिन्दा कर सकता है, पर पत्थर बनी ड्रेगनस को नहीं। दूरपार के कबीले उस रत्न की प्राप्ति के लिए हर्ट लैंड के कबीले से अलग होकर नदी के विभिन्न भागों में बस जाते हैं। उन कबीलों के नाम होते हैं, टेल, टेलन, स्पाइन और फैंग। टेलन ट्राइब ने तो ड्रन से बचने के लिए अपने घर नदी पे बनाए होते हैं। दरअसल पानी में ड्रेगन का असर नहीं होता है, जिससे ड्रन वहाँ नहीं पहुंच पाता। हर्ट कबीले का मुखिया बैंज चाहता है कि सभी कबीले इकट्ठे होकर समझौता कर के फिर से कुमान्द्रा बना ले, जिसमें सभी मिलजुल कर ड्रन से सुरक्षित रहें। इसलिए वह समारोह का आयोजन करता है जिसमें वह सभी कबीलों को बुलाता है। वहाँ

फैंग कबीले का एक बच्चा बैंज की बेटी राया को धोखा देकर सभी कबीलों के लोगों को रत्न तक पहुंचा देती है। वे सभी रत्न के लिए आपस में लड़ने लगते हैं। इससे रत्न पांच टुकड़ों में टूट जाता है। हरेक कबीले के हाथ एक-एक टुकड़ा लगता है। रत्न के टूटने से ड्रन सब पर हमला कर देता है। सब जान बचाने को इधर-उधर भागते हैं। बैंज भी पुल पर खड़े होकर रत्न का टुकड़ा अपनी बेटी को देकर यह कहते हुए उसे नदी में धक्का देता है कि वह कुमान्द्रा बना ले और वह खुद ड्रन के हमले से पत्थर बन जाता है। छः सालों बाद राया नदी का किनारा ढूंढने किश्ती में जा रही होती है ताकि अंतिम ड्रेगन सिसू कहीं मिल जाए। उसे वह रेगिस्तान जैसे टेल कबीले के नजदीक अचानक मिलती है। सिसू उसे बताती है कि वह रत्न उसके भाई बहिनों ने बनाकर उसे सौम्पा था, उसपर विश्वास करके। वह पाती है कि जब वह एक टुकड़ा रखती है तो वह अपनी शक्तियों का उपयोग कर सकती है। हरेक टुकड़ा उसकी अलग किस्म की शक्ति को क्रियाशील करता है। वह सिसू की मदद से वहाँ के मंदिर में रत्न का दूसरा टुकड़ा ढूंढ लेती है। इससे सिसू ड्रेगन को आदमी के रूप में आने की शक्ति मिल जाती है। फिर फैंग कबीले से बचते हुए वे स्पाइन कबीले में पहुंचते हैं। इस यात्रा में राया को पांच छः दोस्त भी मिल जाते हैं, जिनमें कोई तो बच्चे की तरह तो कोई बंदर की तरह और कोई मूर्ख जैसा होता है, हालांकि सभी ताकतवर होते हैं। शक्तिशाली फैंग कबीले की राजकुमारी नमारी से सिसू लड़ना नहीं चाहती, और उसे तोहफा देकर समझाना चाहती है। जब सिसू उसे रत्न के टुकड़े दिखा रही होती है, तब नमारी धोखे से उसपर तीरकमान साध लेती है। डर के मारे राया उसपर जैसे ही तलवार से हमला करने लगती है, वह वैसे ही तीर चला देती है, जिससे सिसू मरकर नदी में गिर जाती है। सारा पानी सूखने लगता है और ड्रन के हमले एकदम से बढ़ जाते हैं। राया के सभी दोस्त और नमारी भी अपने-अपने रत्न के टुकड़े से ड्रन को भगाने लगते हैं, पर कब तक। वे टुकड़े भाप में गायब हो रहे होते हैं। तभी राया को सिसू की बात याद आती है कि रत्न के टुकड़े जोड़ने के लिए विश्वास भी जरूरी है। इसलिए वह नमारी को रत्न का टुकड़ा थमाती है, और खुद पत्थर बन जाती

है। राया को देखकर उसके दोस्त भी नमारी को टुकड़े सौम्प कर खुद पत्थर बन जाते हैं। अंत में नमारी भी अपना टुकड़ा उनमें जोड़कर खुद भी पत्थर बन जाती है। रत्न पूरा होने पर चारों ओर प्रकाश छा जाता है, राया के पिता बैंज समेत सभी पत्थर बने लोग जिन्दा हो जाते हैं। सभी पत्थर बनी ड्रेगन्स भी जिन्दा हो जाती हैं। कुमान्द्रा वापिस लौट आता है, और सभी लोग फिर से मिलजुल कर रहने लगते हैं।

राया एन्ड द लास्ट ड्रेगन का कुंडलिनी-आधारित स्पष्टीकरण

यह चाइनीस ड्रेगन कम और कुंडलिनी तंत्र वाला नाग ज्यादा है। यही सुषुम्ना नाड़ी है। मैं पिछली एक पोस्ट में बता रहा था कि दोनों एक ही हैं, और कुंडलिनी शक्ति को रूपांकित करते हैं। वह रीढ़ की हड्डी जैसे आकार का है, और पानी में मतलब स्पाइनल कॉर्ड के सेरेबरोस्पाइनल फ्लूड में रहता है। मेरुदण्ड में कुंडलिनी शक्ति के प्रवाह से ड्रन-रूपी या पापरूपी बुरे विचार दूर रहते हैं। कुमान्द्रा वह देह-देश है, जिसमें सभी किस्म के भाव अर्थात लोग मिलजुल कर रहते हैं। विभिन्न चक्र ही विभिन्न कबालई क्षेत्र हैं, और उन चक्रोँ पर स्थित विभिन्न मानसिक भाव व विचार ही विभिन्न कबालई लोग हैँ। कुमान्द्रा दरअसल कुंडलिनी योग की अवस्था है, जिसमें सभी चक्रोँ पर कुंडलिनी शक्ति अर्थात ड्रेगन को एकसाथ घुमाया जाता है। हरेक चक्र के योगदान से इस कुंडलिनी शक्ति से एक कुंडलिनी चित्र अर्थात ध्यान चित्र चमकने लगता है। यह कभी किसी चक्र पर तो कभी किसी दूसरे चक्र पर प्रकट होता रहता है। यही वह रत्न है जो द्वैत रूपी ड्रन से बचाता है। आदमी ने उस कुंडलिनी चित्र को केवल अपने हृदय में धारण किया हुआ था। मतलब आदमी साधारण राजयोगी की तरह था, तांत्रिक कुंडलिनी योगी की तरह नहीं। इससे हर्ट लैंड के लोग मतलब हृदय की कोशिकाएं तो शक्ति से भरी थीं, पर अन्य चक्रोँ से संबंधित अंग शक्ति की कमी से जूझ रहे थे। इसलिए स्वाभाविक है कि वे हर्ट कबीले से शक्तिस्रोत रत्न को चुराने का प्रयास कर रहे थे। एकबार हर्टलैंड के मुखिया बैंज मतलब जीवात्मा ने सभी

लोगों को दावत पे बुलाया मतलब सभी चक्रों का सच्चे मन से ध्यान किया। पर उन्होंने मिलजुल कर रहने की अपेक्षा छीनाझपटी की और रत्न को तोड़ दिया, मतलब कि आदमी ने निरंतर के तांत्रिक कुंडलिनी योग के अभ्यास से सभी चक्रों को एकसाथ कुंडलिनी शक्ति नहीं दी, सिर्फ एकबार ध्यान किया या सिर्फ साधारण अर्थात अल्पप्रभावी कुंडलिनी योग किया। इससे स्वाभाविक है कि शक्ति तो चक्रों के बीच में बंट गई, पर कुंडलिनी चित्र गायब हो गया, मतलब वह निराकार शक्ति के रूप में सभी पांचों मुख्य चक्रों पर स्थित हो गया अर्थात रत्न पांच टुकड़ों में टूट गया और एक टुकड़ा हरेक कबीले के पास चला गया। इस शक्ति से सभी चक्रों के लोग जिन्दा तो रह सके थे, पर अज्ञान रूपी ड्रन से पूरी तरह से सुरक्षित नहीं थे, क्योंकि रत्न रूपी सम्पूर्ण कुंडलिनी चित्र नहीं था। अज्ञान से तो ध्यान-चित्र रूपी रत्न ही बचाता है। ध्यान-चित्र अर्थात रत्न के छिन जाने से बैंज नामक आत्मा तो अज्ञान के अँधेरे में डूब गई मतलब वह मर गया, पर उसने बेटी राया मतलब बुद्धि को बचीखुची कुंडलिनी शक्ति का प्रकाश मतलब रत्न का टुकड़ा देकर कहा कि वह शरीर-रूपी दुनिया में पुनः कुमान्द्रा मतलब अद्वैतवाद अर्थात मेलजोल स्थापित करे। राया मतलब बुद्धि फिर पानी मतलब सेरेबरोस्पाइनल फ्लूड या मेरुदण्ड के ध्यान में छलांग लगा देती है, जहाँ कुंडलिनी शक्ति मतलब सिसू ड्रेगन के प्रभाव से वह ड्रन से बच जाती है। दरअसल चक्रों के ध्यान को ही ध्यान कहते हैं। चक्र पर ध्यान को आसान बनाने के लिए बाएं हाथ से चक्र को स्पर्ष कर के रखा जा सकता है, क्योंकि दायां हाथ तो प्राणायाम के लिए नाक को स्पर्ष किए होता है। इससे खुद ही कुंडलिनी चित्र का ध्यान हो जाता है। यही हठयोग की विशिष्टता है। राजयोग में ध्यान-चित्र का ध्यान जबरदस्ती और मस्तिष्क पर बोझ डालकर करना पड़ता है, जो कठिन लगता है। जैसे चक्र का ध्यान करने से खुद ही ध्यानचित्र का ध्यान होने लगता है, उसी तरह मेरुदण्ड में स्थित नागरूपी सुषुम्ना नाड़ी का ध्यान करने से भी कुंडलिनी चित्र का ध्यान खुद ही होने लगता है। स्पर्ष में बड़ी शक्ति है। सुषुम्ना का स्पर्ष पीठ की मालिश करवाने से होता है। ऐसे बहुत से आसन हैं, जिनसे सुषुम्ना पर दबाव का स्पर्ष महसूस होता है। जो कुर्सी पूरी पीठ को

अच्छे से स्पर्ष करके भरपूर सहारा देती है, वह इसीलिए आनंददायी लगती है, क्योंकि उस पर सुषुम्ना क्रियाशील रहती है। जो मैं ओरोबोरस सांप वाली पिछली पोस्ट में बता रहा था कि कैसे एकदूसरे के सहयोग से पुरुष और स्त्री दोनों ही अपने शरीर के आगे वाले चैनल में स्थित चक्रों के रूप में अपने शरीर के स्त्री रूप वाले आधे भाग को क्रियाशील करते हैं, वह सब स्पर्श का ही कमाल है। राया को उस नदी अर्थात सुषुम्ना नाड़ी में ड्रेगन रूपी शक्ति का आभास होता है, इसलिए वह उसकी खोज में लग जाती है। उसे वह टेल आईलैंड में छुपी हुई मतलब उसे शक्ति मूलाधार चक्र में निद्रावस्था में मिल जाती है। उस ड्रेगन रूपी कुंडलिनी शक्ति की मदद से वह रत्न के टुकड़ों को मतलब कुंडलिनी चित्र को उपरोक्त टापुओं पर मतलब शक्ति के अड्डों पर मतलब चक्रों पर ढूंढने लगती है। एक टुकड़ा तो उसके पास दिल या मन या आत्मा या सहस्रार रूपी बैंज का दिया हुआ है ही, सदप्रेरणा के रूप में। आत्मा दिल या मन में ही निवास करती है। दूसरा टुकड़ा उसे टेल आईलैंड के मंदिर मतलब मूलाधार चक्र पर मिल जाता है। इससे ड्रेगन मानव रूप में आ सकती है, मतलब वीर्यबल से कुंडलिनी शक्ति पूरी सुषुम्ना नाड़ी में फैल गई, जो एक फण उठाए नाग या मानव की आकृति की है। टेलन द्वीप के लोग पानी के ऊपर रहते हैं, मतलब फ्रंट स्वाधिष्ठान चक्र के बॉडी सेल्स तरल वीर्य से भरे प्रॉस्टेट के ऊपर स्थित होते हैं। फ्रंट स्वाधिष्ठान चक्र एक पुल जैसे नाड़ी कनेक्शन से रियर स्वाधिष्ठान चक्र से जुड़ा होता है। इसे ही टेलन द्वीप के लोगों का नदी के बीच में बने प्लेटफॉर्म आदि पर घर बना कर रहना बताया गया है। इसी नदी जल रूपी तरल वीर्य की शक्ति से इस द्वीप रूपी चक्र पर ड्रन रूपी अज्ञान या निकम्मेपन का प्रभाव नहीं पड़ता। पुल से गुजरात राज्य के मोरबी का पुल हादसा याद आ गया। हाल ही में एक लोकप्रिय हिंदु मंदिर से जुड़े उस झूलते पुल के टूटने से सौ से ज्यादा लोग नदी में डूब कर मर गए। उनमें ज्यादातर बच्चे थे। सबसे कम आयु का बच्चा दो साल का बताया जा रहा है। टीवी पत्रकार एक ऐसे छोटे बच्चे के जूते दिखा रहे थे, जो नदी में डूब गया था। जूते बिल्कुल नए थे, और उन पर हँसते हुए जोकर का चित्र था। बच्चा अपने नए जूते की खुशी में पुल पर

आनंद में खोया हुआ कूद रहा होगा, और तभी उसे मौत ने अपने आगोश में ले लिया होगा। मौत इसी तरह दबे पाँव आती है। इसीलिए कहते हैं कि मौत को और ईश्वर को हमेशा याद रखना चाहिए। दिल को छूने वाला दृश्य है। जो ऐसे हादसों में बच जाते हैं, वे भी अधिकांशतः तथाकथित मानसिक रूप से अपंग से हो जाते हैं। मैं जब सीनियर सेकंडरी स्कूल में पढ़ता था, तब हमें अंग्रेजी विषय पढ़ाने एक नए अध्यापक आए। वे शांत, गंभीर, चुपचाप, आसक्ति-रहित, और अद्वैतशील जैसे रहते थे। कुछ इंटेलिजेंट बच्चों को तो उनके पढ़ाने का तरीका धीमा और पिछड़ा हुआ लगा पहले वाले अध्यापक की अपेक्षा, पर मुझे बहुत अच्छा लगा। सम्भवतः मैं उनके तथाकथित आध्यात्मिक गुणों से प्रभावित था। प्यार से देखते थे, पर हँसते नहीं थे। कई बार कुछ सोचते हुए कहा करते थे कि कभी किसी का बुरा नहीं करना चाहिए, इस जीवन में क्या रखा है आदि। बाद में सुनने में आया कि जब वे अपने पिछले स्कूल में स्कूल का कैश लेके जा रहे थे, तब कुछ बदमाशों ने उनसे पैसे छीनकर उन्हें स्कूटर समेत सड़क के पुल से नीचे धकेल दिया था। वहाँ वे बेहोश पड़े रहे जब उनकी पत्नि ने उन्हें ढूंढते हुए वहाँ से अस्पताल पहुंचाया। डरे हुए और मजबूर आदमी के तरक्की के सारे रास्ते बंद हो जाते हैं, यहाँ तक कि उसकी पहले की की हुई तरक्की भी नष्ट होने लगती है। बेशक वह पिछली तरक्की के बल पर आध्यात्मिक तरक्की जरूर कर ले। पर पिछली तरक्की का बल भी कब तक रहेगा। हिन्दुओं को पहले इस्लामिक हमलावरों ने डराया, अब पाकिस्तान पोषित इस्लामिक आतंकवाद डरा रहा है। तथाकथित ख़ालिस्तानी आतंकवाद भी इनमें एक है। जिस धर्म के लोगों और गुरुओं ने मुग़ल हमलावरों से हिंदु धर्म की रक्षा के लिए हँसते-हँसते अपने प्राण न्योछावर कर दिए थे, आज उन्हींके कुछ मुट्ठी भर लोग तथाकथित हिंदुविरोधी खालिस्तान आंदोलन का समर्थन कर रहे हैं, बाकि अधिकांश लोग भय आदि के कारण चुप रहते हैं, क्योंकि बहुत से बोलने वालों को या तो जबरन चुप करवा दिया गया या मरवा दिया गया। अगर विरोध में थोड़ा-थोड़ा सब स्वतंत्र रूप से बोलें, तो आतंकवादी किस किस को मारेंगे। सूत्रों के अनुसार कनाडा उनका मुख्य अड्डा बना हुआ है। अभी हाल ही में हिन्दूवादी

शिवसेना के नेता सुधीर सूरी की तब गोली मारकर हत्या कर दी गई, जब वे देव मूर्तियों को कूड़े में फ़ेंके जाने का विरोध करने के लिए शांतिपूर्ण प्रदर्शन कर रहे थे। सूत्रों के अनुसार इसके तार भी पाक-समर्थित खालिस्तान से जुड़े बताए जा रहे हैं। तथाकथित हिंदु विचारधारा वाले राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के नेता गगनेजा हो या रवीन्द्र गोसाईं, इस अंतर्राष्ट्रीय साजिश के शिकार लोगों की सूचि लंबी है। गहराई से देखने पर तो यह लगता है कि हिंदु ही हिंदु से लड़ रहे हैं, उकसाने और साजिश रचने वाले तथाकथित बाहर वाले होते हैं। हाँ, अब पोस्ट के मूल विषय पर लौटते हैं। आपने भी देखा ही होगा कि कोई चाहे कैसा ही क्यों न हो, किसी न किसी बहाने सम्भोग की तरफ आकर्षित हो ही जाता है, ताकि अपनी ऊर्जा को बढ़ा सके, मतलब यहाँ निकम्मापन नहीं पनपता। तीसरा टुकड़ा उसे स्पाइन ट्राईब अर्थात मेरुदण्ड में मिला, सुषुम्ना में उठ रही संवेदना के रूप में। मेरुदण्ड स्थित कुंडलिनी शक्ति अर्थात सिसू ड्रेगन को कुंडलिनी चित्र चक्रों से मिला होता है, जैसा कि शिवपुराण में आता है कि ऋषिपत्नियों (चक्रों) ने अपने वीर्य तेज को हिमालय (मेरुदण्ड) को दिया। इसीको सिसू कहती है कि उसे रत्न के टुकड़े उसके भाई-बहिनों ने दिए, जो इन विभिन्न टापुओं पर रहते थे। हरेक चक्र से मिली कुंडलिनी चित्र रूपी चिंतन शक्ति से सिसू रूपी कुंडलिनी शक्ति मजबूती प्राप्त करती है, और अपने मस्तिष्क में अर्थात आदमी के मस्तिष्क में (क्योंकि फन उठाए नाग का मस्तिष्क ही आदमी का मस्तिष्क है) एक विशेष शक्ति और उससे एक नया सकारात्मक रूपांतरण महसूस करती है। इसको उपरोक्त मिथक कथा में ऐसे कहा है कि हरेक रत्न का टुकड़ा प्राप्त करने से वह एक विशेष नई शक्ति प्राप्त करती है। राया और सिसू फैंग कबीले से बचते हुए स्पाइन कबीले में पहुंचते हैं, मतलब अवेयरनेस या बुद्धि और कुंडलिनी शक्ति आगे के चक्रों से ऊपर नहीं चढ़ती, अपितु पीछे स्थित रीढ़ की हड्डी से ऊपर चढ़ती है। यह इसलिए कहा गया है क्योंकि फैंग मतलब मुंह का नुकीला दाँत आगे के चक्रों के रास्ते में ही आता है। इस यात्रा में उसे चार-पांच मददगार दोस्त मिल जाते हैं, मतलब पाँच प्राण और मांसपेशियों की ताकत जो कि कुंडलिनी शक्ति को घुमाने में मदद करते हैं।

फैंग आईलैंड में वे पीछे से मतलब पीछे के विशुद्धि चक्र से प्रविष्ट होती हैं। वह इसलिए क्योंकि कुंडलिनी शक्ति को विशुद्धि चक्र से ऊपर चढ़ाना सबसे कठिन है, इसलिए वह आगे की तरफ फ़िसलती है। वहाँ राजकुमारी निमारी मतलब बीमारी मतलब कमजोरी या अंधभौतिकता उसे मार देती है, मतलब उसे वापिस हटने पर मजबूर करती है, और वह नदी में गिर जाती है, मतलब मेरुदण्ड के फ्लूड में बहती हुई वापिस नीचे चली जाती है। उससे बवंडर ताकतवर होकर लोगों को मारने लगते हैं, मतलब चक्रों में फँसी भावनाओं को बाहर निकलने का मौका न देकर वहीं उन्हें पत्थर अर्थात शून्य अर्थात बेजान बनाने लगते हैं। चक्र भी बवंडर की तरह गोलाकार होते हैं। सिसू नमारी से लड़ना नहीं चाहती मतलब जब कुंडलिनी शक्ति विशुद्धि चक्र को लांघ कर ऊपर चढ़ने लगती है, तब मन की लड़ाई-झगड़े वाली सोच नष्ट हो जाती है। मन का सतोगुण बढ़ा हुआ होता है। वह नमारी को तोहफा देना चाहती है मतलब उसे कुछ मिष्ठान्न आदि खिलाकर। वैसे भी मुंह में कुछ होने पर कुंडलिनी सर्कट कम्प्लीट हो जाता है, जिससे कुंडलिनी आसानी से घूमने लगती है। पर हुआ उल्टा। उस तोहफे से कुंडलिनी की मदद करने की बजाय वह दुनियादारी के दोषों जैसे गुस्से, लड़ाई व अति भौतिकता आदि को बढ़ाने लगी। इससे तो कुंडलिनी शक्ति नष्ट होगी ही। इसको ऐसे दिखाया गया है कि सिसू तीर लगने से मरकर नदी में गिर जाती है, मतलब शक्ति फिर सेरेबरोस्पाइनल द्रव से होती हुई मेरुदण्ड में वापिस नीचे चली जाती है। इससे फिर से ड्रन के हमले शुरु हो जाते हैं। इससे शक्ति की कमी से टुकड़ों में बंटे कुंडलिनीचित्र रूपी रत्न से वे बवंडर से बचने की कोशिश करते हैं, पर शक्ति के बिना कब तक कुंडलिनी चित्र बचा पाएगा। कुंडलिनी चित्र अर्थात ध्यान चित्र को शक्ति से ही जान और चमक मिलती है, और शक्ति को कुंडलिनी चित्र से। दोनों एकदूसरे के पूरक हैं। इससे वह मेडिटेशन चित्र भी धूमिल पड़ने लगता है। इससे राया मतलब बुद्धि को याद आता है कि आपसी सौहार्द और विश्वास से ही सीसू मतलब शक्ति ने वह कुंडलिनी रत्न प्राप्त किया था। इसलिए वह अपना रत्न भाग नमारी मतलब दुनियादारी या भौतिकता को दे देती है। सभी अंग और प्राण बुद्धि का ही अनुगमन करते हैं, इसलिए

उसके सभी दोस्त मतलब प्राण भी जिन्होंने विभिन्न चक्रों से कुंडलिनी भागों को कैपचर किया है, वे भी अपनेअपने रत्नभाग नमारी को दे देते हैं। नमारी भी अपना टुकड़ा उसमें जोड़ देती है, मतलब वह भी पूरी शक्ति का इस्तेमाल करते हुए दुनियादारी में अनासक्ति और अद्वैत के साथ व्यवहार करने लगती है। इससे वह रत्न पूरा जुड़ जाता है मतलब अद्वैत की शक्ति से कुंडलिनी चित्र आनंद और शांति के साथ पूरा चमकने लगता है। इससे चक्रों में दबी हुई भावनाएँ फिर से प्रकट होकर आत्मा के आनंद में विलीन होने लगती हैं, मतलब बवंडर द्वारा पत्थर बनाए लोग फिर से जिन्दा होकर आनंद मनाने लगते हैं। सुषुम्ना की शक्ति भी उस चित्र की मदद से जागने लगती है। सुषुम्ना नाड़ी के साथ ही शरीर की अन्य सभी नाड़ियों में भी अवेयरनेस दौड़ने लगती है, मतलब उनमें दौड़ती हुई शक्ति की सरसराहट आनंद के साथ महसूस होने लगती है। इसको ऐसे कहा गया है कि फिर पत्थर बनी सभी ड्रेगन भी जिन्दा हो जाती हैं। वे ड्रेगन पूरे कुमान्द्रा में खुशहाली और समृद्धि वापिस ले आती है। क्योंकि शरीर भी एक विशाल देश की तरह ही है, जिसमें शक्ति ही सबकुछ करती है। हरेक नाड़ी में आनंदमय शक्ति के दौड़ने से पूरा शरीर खुशहाल, हट्टाकट्टा और तंदुरस्त तो बनेगा ही। इससे पहले रत्न के टुकड़े पत्थर बने लोगों को तो जिन्दा कर पा रहे थे पर पत्थर बनी ड्रेगनों को नहीं। इसका मतलब है कि धुंधले कुंडलिनी चित्र से चक्रों में दबी भावनाएँ तो उभरने लगती हैं, पर उससे सरसराहट के साथ चलने वाली शक्ति महसूस नहीं होती। शक्तिशाली नाग के रूप में सरसराहट करने वाली कुण्डलिनी शक्ति मानसिक कुंडलिनी छवि का ही अनुसरण करती है। इसके और आगे, तांत्रिक यौन योग इस शक्ति को और ज्यादा मजबूती प्रदान करता है। महाराज ओशो भी यही कहते हैं। मतलब कि शक्ति चक्रों पर विशेषकर मूलाधार चक्र में सोई हुई अवस्था में रहती है। इसका प्रमाण यह भी है कि यदि आप मन में नींद-नींद का उच्चारण करने लगो, तो कुंडलिनी शक्ति के साथ कुंडलिनी चित्र स्वाधिष्ठान चक्र और मूलाधार चक्र पर महसूस होने लगेगा, नाभि चक्र में भी अंदर की ओर सिकुड़न महसूस होगी। साथ में रिलेक्स फील भी होता है, असंयमित विचारों की बाढ़ शांत हो

जाती है, मस्तिष्क में दबाव एकदम से कम होता हुआ महसूस होता है, और सिरदर्द से भी राहत मिलती है। यह तकनीक उनके लिए बहुत फायदेमंद है जिनको नींद कम आती हो या जो तनाव में रहते हैं।

निद्रा देवी ही नींद की अधिष्ठात्री है। "श्री निद्रा है" मंत्र मैंने डिज़ाइन किया है। श्री से शरीरविज्ञान दर्शन का अद्वैत अनुभव होता है, जिससे कुंडलिनी मस्तिष्क में कुछ दबाव बढ़ाती है, निद्रा से वह कुंडलिनी दबाव के साथ निचले चक्रों में उतर जाती है, है से आदमी सामान्य स्थिति में लौट आता है। अगर योग करते हुए मस्तिष्क में दबाव बढ़ने लगे, तब भी यह उपाय बहुत कारगर है। दरअसल योग के लिए नींद भी बहुत जरूरी है। जागृति नींद के सापेक्ष ही है, इसलिए नींद से ही मिल सकती है। जो जबरदस्ती ही हमेशा ही सतोगुण को बढ़ा के रखकर जागे रहने का प्रयास करता है, वह कई बार मुझे ढोंग लगता है, और उससे आध्यात्मिक जागृति प्राप्त होने में मुझे संदेह है। इसी तरह किताब में पढ़ते समय मुझे लगता था कि शाम्भवी मुद्रा पता नहीं कितनी बड़ी चमत्कारिक विद्या है, क्योंकि लिखा ही ऐसा होता था। लेखन इसलिए होता है ताकि कठिन चीज सरल बन सके, न कि उल्टा। सब कुछ सरल है यदि व्यावहारिक ढंग से समझा जाए। नाक पर या नासिकाग्र पर नजर रखना कुंडलिनी शक्ति को केंद्रीकृत कर के घुमाने के लिए एक आम व साधारण सी प्रेक्टिस है। एकसाथ दोनों आँखों से बराबर देखने से आज्ञा चक्र पर भी ध्यान चला जाता है, यह भी साधारण अभ्यास है। जीभ को तालू से ज्यादा से ज्यादा पीछे छुआ कर रखना भी एक साधारण योग टेक्टिक है। इन तीनों तकनीकों को एकसाथ मिलाने से शाम्भवी मुद्रा बन जाती है, जिससे तीनों के लाभ एकसाथ और प्रभावी रूप से मिलते हैं। इसीलिए जीवन संतुलित होना चाहिए ताकि उसमें पूरे शरीर का बराबर योगदान बना रहे, और शरीर कुमान्द्रा अर्थात संतुलित बना रहे। संतुलन ही योग है। इसी तरह रत्न के टुकड़े लोगों का ड्रन से स्थायी बचाव नहीं कर पा रहे थे। यह राजयोग वाला उपाय है, जिसमें केवल मन या दिल में कुंडलिनी चित्र का ध्यान किया जाता है, हठयोग के योगासन व प्राणायाम आदि के रूप

में पूरी योगसाधना नहीं की जाती। इसलिए जबतक कुंडलिनी चित्र का ध्यान किया जाता है तब तक तो वह बना रहता है, पर जैसे ही ध्यान हटाया जाता है, वैसे ही वह एकदम से धूमिल पड़ जाता है। यही बैंज कबीले वाला स्थानीय उपाय है। इससे मन या हृदय में तो ड्रन से बचाव होता है, पर अन्य चक्रों पर लोगों के पत्थर बनने के रूप में भावनाएँ दबती रहती हैं। इसलिए सम्पूर्ण, सार्वकालिक व सार्वभौमिक उपाय हठयोग के साथ यथोचित दुनियादारी ही है, राजयोग मतलब खाली बैठकर केवल ध्यान लगाना नहीं। ऐसा इसलिए क्योंकि हठयोग में पूरे शरीर का और बाहरी संसार का यथोचित इस्तेमाल होता है। संसार में भी पूरे शरीर का इस्तेमाल होता है, केवल मन व दिल का ही नहीं। हालांकि प्रारम्भिक तौर पर पूर्ण सात्विक राजयोग ही कुंडलिनी चित्र को तैयार करता है, और उसे संभाल कर रखता है। यह ऐसे ही है, जैसे बैंज कबीले के मुखिया ने रत्न को संभाल कर रखा हुआ था। कई लोग हठयोग के आसनों को देखकर बोलते हैं कि यह तो शारीरिक व्यायाम है, असली योग तो मन में ध्यान से होता है। उनका कहने का मतलब है कि मन रूपी चिड़िया बिना किसी आधार के खाली अंतरिक्ष में उड़ती रहती है। पर सच्चाई यह है कि मन रूपी चिड़िया शरीर रूपी पेड़ पर निवास करती है। पेड़ जितना ज्यादा स्वस्थ और फलवान होगा, चिड़िया उतनी ही ज्यादा खुश रहेगी।

कुंडलिनी-ध्यानचित्र का वाममार्गी तांत्रिक यौनयोग में महत्त्व

मित्रो, मैं इस पोस्ट में शिवपुराण में वर्णित राक्षस अंधकासुर, दैत्यगुरु शुक्राचार्य, देवासुर संग्राम और शिव के द्वारा देवताओं की सहायता का रहस्योदघाटन करूंगा।

शिवपुराणोक्त अन्धकासुर कथा

एक बार भगवान शिव पार्वती के साथ काशी से निकलकर कैलाश पहुंचते हैं, और वहाँ भ्रमण करने लगते हैं। एकदिन शिव ध्यान में होते हैं कि तभी देवी पार्वती पीछे से आकर उनके मस्तक पर हाथ रखती हैं, जिससे शिव के माथे की गर्मी से उनकी अंगुली से एक पसीने की बूंद जमीन पर गिर जाती है। उससे एक बालक का जन्म होता है, जो बहुत कुरूप, रोने वाला और अंधा होता है। इसलिए उसका नाम अंधकासुर रखा जाता है। उधर राक्षस हिरण्याक्ष पुत्र न होने से बहुत दुखी रहता है। वह शिव को प्रसन्न करने के लिए घोर तप करता है, और उनसे पुत्र-प्राप्ति का वर मांगता है। शिव अंधक को उसे सौंप देते हैं। वह शिवपुत्र अंधक की प्राप्ति से अति प्रसन्न और उत्साहित होकर स्वर्ग पर चढ़ाई कर देता है, जिससे देवता स्वर्ग से भागकर धरती पर छिप कर रहने लगते हैं। वह धरती को समुद्र में डुबोकर पाताल लोक में छुपा देता है। फिर भगवान विष्णु देवताओं की सहायता करने के लिए वाराह के रूप में अवतार लेकर हिरण्याक्ष को मार देते हैं और धरती को अपने दाँतों पर रखकर पाताल से ऊपर उठाकर पूर्ववत यथास्थान रख देते हैं। उधर बालक अंधक जब अपने भाई प्रह्लाद आदि अन्य राक्षस बालकों के साथ खेल रहा होता है, तो वे उसे यह कह कर चिढ़ाते हैं कि वह अंधा और कुरूप है इसलिए वह अपने पिता हिरण्याक्ष की जगह राजगद्दी नहीं संभाल सकता। इससे अन्धक दुखी होकर भगवान शिव को खुश करने के लिए घोर तप

करने लगता है। वह धुएं वाली अग्नि को पीता है, अपने मांस को काटकाट कर हवनकुण्ड में हवन करता है। इससे वह हड्डी का कंकाल मात्र बच जाता है। शिवजी उससे प्रसन्न होकर उसके मांगे वर के अनुसार उसे बिल्कुल स्वस्थ व आँखों वाला कर देते हैं, और कहते हैं कि वह केवल तभी मरेगा जब किसी महान योगी की पतिव्रता स्त्री को अपनी स्त्री बनाने का प्रयास करेगा। वर से खुश और दंभित होकर अन्धक उग्र भोगविलास में डूब जाता है, अनेकों कामिनियों के साथ विभिन्न रतिवर्धक स्थानों में रमण करता है, और अपनी आयु का दुरुपयोग करता है। वह साधुओं और देवताओं पर भी बहुत अत्याचार करता है। वे सब इकट्ठे होकर भगवान शिव के पास जाते हैं। शिव उनकी मदद करने के लिए कैलाश पर पार्वती के साथ विहार करने लगते हैं। एकदिन अन्धक के सेवक की नजर देवी पार्वती पर पड़ती है, और वह यह बात अन्धक को बताता है। अंधक पार्वती पर आसक्त होकर शिव को गंदा तपस्वी, जटाधारी आदि कह कर उनका अपमान करता है और कहता है कि उतनी सुंदर नारी उसी के योग्य है, न कि किसी तपस्वी के। फिर वह सेना के साथ शिव से युद्ध करने चला जाता है। उसे शिव का गण वीरक अकेले ही युद्ध में हरा कर भगा देता है, और उसे शिवगुफा के अंदर प्रविष्ट नहीं होने देता। फिर शिव पाशुपत मंत्र प्राप्त करने के लिए दूर तप करने चले जाते हैं। मौका देखकर अंधक फिर हमला करता है। पार्वती अकेली होती है गुफा में। उसे वीरक भी नहीं रोक पा रहा होता है। डर के मारे पार्वती सभी देवताओं को सहायता के लिए बुलाती है, जो फिर स्त्री रूप में अस्त्रशस्त्र लेकर पहुंच जाते हैं। स्त्री रूप इसलिए क्योंकि देवी के कक्ष में पुरुष रूप में जाना उन्हें अच्छा नहीं लगता। घोर युद्ध होता है। अंधक का सैनिक विघस सूर्य चन्द्रमा आदि देवताओं को निगल जाता है। चारों ओर अंधेरा छा जाता है। हालांकि वे किसी दिव्य मंत्र के जाप से उसके मुंह में घूँसे मारकर बाहर भी निकल आते हैं। तभी शिव भी वहाँ पहुँच जाते हैं। उससे उत्साहित गण राक्षसों को मारने लगते हैं। पर राक्षस गुरु शुक्राचार्य अपनी संजीवनी विद्या से सभी मृत राक्षसों को पुनर्जीवित कर देते हैं। शिव को यह बात शिवगण बता देते हैं कि शुक्राचार्य उनकी दी हुई विद्या का कैसे दुरूपयोग कर रहा है।

इससे नाराज होकर शिव उसे पकड़ कर लाने के लिए नंदी बैल को भेजते हैं। नंदी राक्षसों को मारकर उसे पकड़कर ले आता है। शिव शुक्राचार्य को निगल जाते हैं। वह शिव के उदर में बाहर निकलने का छेद न पाकर चारों तरफ ऐसे घूमता है, जैसे वायु के वेग से घूम रहा हो। वह वहाँ से निकलने का वर्षों तक प्रयास करता है, पर निकल नहीं पाता। फिर शिव उसे शुक्र अर्थात वीर्य रूप में अपने लिंग से बाहर निकालते हैं। इसीलिए उनका नाम शुक्राचार्य पड़ा।

दरअसल संजीवनी विद्या उन्हें एक बहुत पुराने समय में शिव ने दी होती है। वह एक बहुत सुंदर स्थान पर शिव का लिंग स्थापित करते हैं। उस पर वे शिव की कठिन अराधना करते हैं। अग्निधूम को पीते हैं, और कठिन तप करते हैं। उससे शिव लिंग से प्रकट होकर उन्हें संजीवनी विद्या देते हैं, और वर देते हैं कि वे भविष्य में उनके उदर में प्रविष्ट होकर उनके वीर्य रूप में जन्म लेंगे। वे लिंग का नाम शुक्रेश और उनके द्वारा स्थापित कुएँ का नाम शुक्रकूप रख देते हैं। वे भक्तों द्वारा उस कूप में स्नान करने का अमित फल बताते हैं।

अंधकासुर कथा का कुंडलिनी-आधारित विश्लेषण

शुक्र मतलब ऊर्जा या तेज। शुक्र, ऊर्जा और तेज तीनों एकदूसरे के पर्याय हैं। शुक्राचार्य को निगल गए, मतलब योगी शिव ने खेचरी मुद्रा में जिह्वा तालु से लगाकर कुंडलिनी ऊर्जा को आगे के नाड़ी चैनल से नीचे उतारा, जिससे वीर्यशक्ति के रूपान्तरण से निर्मित कुंडलिनी ऊर्जा मूलाधार चक्र से पीठ की सुषुम्ना नाड़ी से होते हुए ऊपर चढ़ गई। वायु के वेग से वे इधरउधर भटकने लगे, मतलब साँसों की गति से कुंडलिनी ऊर्जा माइक्रोकोस्मिक औरबिट लूप में गोल-गोल घूमने लगी। शुक्राचार्य को बहुत समय तक घुमाने के बाद योगी शिव ने उन्हें वीर्य मार्ग से बाहर निकाल दिया, मतलब बहुत समय तक शक्ति को चक्रों में घुमाते हुए व उससे चक्रों पर इष्ट देव या गुरु आदि के रूप में कुंडलिनी चित्र का ध्यान करने के बाद जब वह शक्ति क्षीण होने लगी

मतलब शुक्राचार्य शिथिल पड़ने लगे, तब उसे वीर्यरूप में बाहर निकाल दिया। उन्हें योगी शिव ने पुत्र रूप में स्वीकार किया, मतलब कि जिसे ओशो महाराज कहते हैं, 'संभोग से समाधि', वह तरीका अपनाया। इस यौनतंत्र में सहस्रार चक्र के समाधि चित्र को स्खलन-संवेदना के ऊपर आरोपित किया जाता है। इससे वही बात हुई जैसी एक पिछली पोस्ट में लिखी गई है कि गंगा नदी के किनारे पर उगी सरकंडे की घास पर शिववीर्य से बालक कार्तिकेय का जन्म हुआ, मतलब शुक्राचार्य ने कार्तिकेय के रूप में शिवपुत्रत्व प्राप्त किया। उपरोक्त कथा के ही अनुसार सबसे प्रसिद्ध, प्रिय व शक्तिशाली लिंग शुक्रलिंग ही माना जाएगा, क्योंकि यह पूरी तरह से असली है, अन्य तो प्रतीतात्मक ज्यादा हैं, जैसे कोई पाषाणलिंग होता है, कोई पारदलिंग, तो कोई हिमलिंग आदि। शुक्रकूप आसपास में एक ठंडे जल का कुआँ है, जो संभोगतंत्र में सहयोगी है, क्योंकि जैसा एक पिछली पोस्ट में दिखाया गया है कि कैसे ठंडे जल से स्नान यौनऊर्जा को गतिशील व कार्यशील बनाने का काम करता है।

शुक्राचार्य जो राक्षसों को जिन्दा कर रहे थे, उसका यही मतलब है कि वीर्यशक्ति बाह्यगामी होने के कारण संसारमार्गी मानसिक दोषों, आसक्तिपूर्ण भावनाओं और विचारों को बढ़ावा दे रही थी। शिव ने नंदी को शुक्राचार्य को पकड़ कर लाने को कहा, इसका मतलब है कि नंदी अद्वैत भाव का परिचायक है क्योंकि वह एक ऐसा शिवगण है जिसमें बैल के रूप में पशु और गण के रूप में मनुष्य एक साथ विद्यमान है। वह एक यिन-यांग मिश्रण है। अद्वैत से कुंडलिनी शक्ति को मूलाधार से ऊपर चढ़ने में मदद मिलती है।

देवी पार्वती ने महादेव शिव की आँखें बंद कीं, इससे वे अंधे जैसे हो गए। इसको यह समझाने के लिए कहा गया है कि कोई भावी योगी अज्ञान वाली अवस्था में था, न तो उसे लौकिक व्यवहार का ज्ञान था, और न ही आध्यात्मिक ज्ञान। फिर वह इश्कविश्क़ के चक्कर में पड़ गया। उससे उसकी शक्ति तो घूमने लगी, पर वह बिना कुंडलिनी चित्र के थी। कुंडलिनी चित्र

माने ध्यान चित्र आध्यात्मिक ज्ञान की उच्चावस्था में बनता है। आध्यात्मिक ज्ञान लौकिक ज्ञान व अनुभव के उत्कर्ष से प्राप्त होता है। ऐसा होने में जीवन का लम्बा समय बीत जाता है। ज्ञानविज्ञानरहित प्यार-मोहब्बत से क्या होता है कि आदमी यौन शक्ति को ढंग से रूपान्तरित और निर्देशित नहीं कर सकता, जिससे उसका क्षरण या दुरुपयोग होता है। वही दुरुपयोग अंधक नाम वाला पुत्र है। इसका सीधा सा अर्थ है कि अमुक भावी योगी ने शक्ति को घुमाया तो जरूर। ऐसा उक्त कथानक की इस बात से सिद्ध होता है कि पार्वती ने दोनों नेत्रों को एकसाथ बंद किया, मतलब यिन-यांग संतुलित हो गए। पर परिपक्वता की कमी से इस संतुलन से किंचित चमक रहे कुंडलिनी चित्र को समझ नहीं पाया और उसे जानबूझकर व्यर्थ समझ कर त्याग दिया। चमक बुझने से स्वाभाविक है कि अंधेरा छा गया, जिसे आँखों को बंद करने के रूप में दिखाया गया है। क्योंकि शक्ति से मस्तिष्क में जो उच्च स्पष्टता के साथ छवि बनती है, उसे ही पुत्र कहा जाता है, जैसे कि इस ब्लॉग की एक पोस्ट में सिद्ध भी किया गया था। बिना किसी भौतिक सहवास के असली या भौतिक पुत्र तो पैदा हो ही नहीं सकता, वह भी मिट्टी-पत्थर से भरी जमीन के ऊपर या सरकंडों के ऊपर। क्योंकि इस पोस्ट के भावी योगी के मस्तिष्क में उस शक्ति से अंधेरा ही घनीभूत हुआ, इसलिए उसे पुत्र अंधक के रूप में दिखाया गया। चूंकि अँधेरे से भरा व्यक्ति किसी को प्रिय व कार्यक्षम नहीं लगता, इसलिए इसे ऐसा दिखाया गया है कि वह अंधकासुर सबको अप्रिय था और उसके बालमित्र उसे राजगद्दी के अयोग्य बताकर उसका मजाक उड़ाते थे। स्वाभाविक है कि भावी योगी दुनिया में सम्मान, सुखसमृद्धि और यहाँ तक कि जागृति के रूप में सम्पूर्णता को प्राप्त करने के लिए भरपूर प्रयास करता है, क्योंकि उसमें बहुत शक्ति होती है, केवल स्थिर ध्यानचित्र की ही कमी होती है। उसे दुनिया में ठोकरें खाने के बाद इस कमी का अप्रत्यक्ष अहसास हो ही जाता है, इसलिए वह कुंडलिनी ध्यानयोग के लिए एकांत में चला जाता है। इसे ही ऐसे दिखाया गया है कि अंधक फिर वन में जाकर शिव या ब्रह्मा का ध्यान करते हुए घोर तप करता है। अपने मांस को टुकड़ों में काटकाट कर वह उन्हें अग्नि में होम करता रहता है।

साथ में अग्निधूम का पान करता है। इसका मतलब है कि भावी योगी कठिन हठयोग करता है, जिससे उसकी अतिरिक्त चर्बी तो घुलती ही है, साथ में मांसल शरीर भी योगाग्नि से जलकर दुबला हो जाता है। इस दहन से जो कार्बन डायक्साइड गैस निकलती है, उसे ही धुआँ कहा है। क्योंकि योग में अक्सर सांस को अंदर रोक कर रखा जाता है, इसलिए उसे ही धुएं को पीना कहा गया है। जब वह इतना कमजोर हो जाता है कि वह हड्डी का ढांचा जैसा दिखने लगता है, तब भगवान शिव उसे दर्शन दे देते हैं। इसका मतलब है कि जब हठयोगाभ्यास करते हुए काफी समय हो जाता है, जिससे योगी को अपने सहस्रार चक्र में बढ़ी हुई सात्विकता के कारण अपना शरीर अस्थिपंजर की तरह हल्का लगने लगता है, तब कुंडलिनी जागृत हो जाती है। मतलब अदृश्य या सुप्त कुंडलिनी शक्ति मानसिक शिवचित्र के रूप में जागृत हो जाती है। अब शिव अंधक को बिल्कुल स्वस्थ व सुंदर बना देते हैं। ठीक है, कुंडलिनी जागरण से ऐसा ही अकस्मात और सकारात्मक रूपान्तरण होता है। अब वह शिव से वर मांगता है कि वह कभी न मरे। शिव कहते हैं कि ऐसा सम्भव नहीं। विश्व की रक्षा के लिए भी यह जरूरी है। अमरता पाकर तो कोई भी अत्याचारी बनकर दुनिया को तबाह कर सकता है, क्योंकि उसे रोकने व डराने वाला कोई नहीं होगा। इसलिए ब्रह्मा उससे कोई न कोई मौत का कारण चुनने को कहते हैं, बेशक वह असम्भव सा ही क्यों न लगे। इस पर ब्रह्मा कहते हैं कि जब वह माँ के समान आदरणीय महिला को पत्नि बनाना चाहेगा, वह तब मरेगा। अब ये तंत्र की गूढ़ बातें हैं, जिनके यदि रहस्य से पर्दा उठाया जाए, तो आम जनमानस को अजीब लग सकता है। तिब्बतन यौनतंत्र में गुरु की यौनसाथी उनकी अनुमति से उनके शिष्यों को तांत्रिक यौनकला प्रयोगात्मक रूप में सिखाती है। गुरुपत्नि को माँ के समान माना गया है। मतलब कि तांत्रिक यौनयोग सीखने के बाद अंधक अंधी दुनियादारी से उपरत होकर अपनी आत्मा या अपने आप में शांत हो जाएगा, मतलब वह एक प्रकार से मर जाएगा। बाद में हुआ भी वैसा ही, मरने के बाद उसे शिव ने अपना गण बना लिया, मतलब वह मुक्त हो गया। आम मृत्यु के बाद तो कोई मुक्त नहीं होता। इसका एक मतलब यह भी है कि जब विवाह या

सम्भोग के अयोग्य सम्मानित नारी से प्यार होता है, तब उसका रूप बारबार मन में आने लगता है, जिससे वह समाधि का रूप ले लेता है, जैसा कि प्रेमयोगी वज्र के साथ भी हुआ था। ब्रह्मा के वर को पाकर अन्धक राजा बन गया, और बहुत अय्याश हो गया। सुंदर व सुडोल शरीर तो उसे मिला ही था, इसलिए वह अनगिनत कामिनियों के साथ विभिन्न मनोहर स्थानों में रमण करते हुए अपना बहुमूल्य समय नष्ट करने लगा। इस यौन शक्ति के बल से वह बहुत पाप भी करने लगा। देवताओं को स्वर्ग से भगा कर वहाँ खुद राज करने लगा। जब कोई बुरे काम करेगा तो शरीर रूपी स्वर्ग में स्थित देवता दुखी होकर भागेंगे ही, क्योंकि देवताओं का मुख्य उद्देश्य है शरीर से अच्छे काम करवाना। अब मैं इससे जुड़ी हाल की घटना बताता हूँ और फिर पोस्ट को खत्म करता हूँ क्योंकि नहीं तो यह बहुत लंबी होकर पढ़ने में मुश्किल हो जाएगी। अगले हफ्ते तक शेष कथा के रहस्य को उजागर करने की कोशिश करूंगा, क्योंकि अभी मैं लगभग इतना ही समझ सका हूँ। हो सकता है कि आप मेरे से पहले उजागर कर दें, यदि ऐसा है तो कमेंट बॉक्स में जरूर लिखना।

आफताब-श्रद्धा से जुड़ा बहुचर्चित लवजिहाद काण्ड

आजकल बहुचर्चित आफताब पूनावाला से संबंधित मर्डर मिस्ट्री उपरोक्त अंधक कथा से बहुत मेल खा रही है। सूत्रों के अनुसार वह मुस्लिम युवक श्रद्धा नामक हिंदु लड़की के साथ लिव इन रिलेशनशिप में था। वह डेटिंग ऐप के माध्यम से अपना घरपरिवार छोड़कर उसके साथ लम्बे अरसे से रह रही थी। कई मकान मालिकों को तो वह उसे अपनी पत्नि तक बता कर साथ रखता था, क्योंकि यहाँ के परिवेश में लिव इन रिलेशनशिप को अच्छा नहीं समझा जाता। चोरी छुपे उसके 20 अन्य हिंदु लड़कियों के साथ भी प्रेमसंबंध थे। श्रद्धा को शायद यह बात पता चली होगी और वह उसे ऐसा करने से रोककर उससे शादी करना चाहती होगी। इसको लेकर झगड़े भी हुए और मारपीट भी। अंततः उसने उसका गला दबाकर हत्या कर दी और बिना

अफ़सोस के उसके पेंतीस टुकड़े करके उन्हें फ्रिज में पैक कर दिया। धीरेधीरे करके वह उन्हें निकट के जंगल में फ़ेंकता रहा। छः महीने बाद श्रद्धा के पिता द्वारा लिखी शिकायत के बाद पुलिस उसे पकड़ सकी। यहाँ यह ध्यान देने योग्य बात है कि आज की तथाकथित आधुनिक महिलाओं को प्रसन्न करने के लिए कैसे आफताब की तरह शातिर, बेईमान, नशेड़ी, धूम्रपानी, मांसभक्षी, हिंसक और धोखेबाज बनना पड़ता है, हालाँकि ऐसे अतिवाद को कोई सभ्य व पढ़ालिखा समाज कभी बर्दाश्त नहीं कर सकता, जिसमें मानवता का हनन होता हो। दूसरी ध्यान देने योग्य बात यह है कि बहुत से हिन्दुओं द्वारा शिवपुराण का कहीं गलत अर्थ तो नहीं निकला जा रहा, या बिना जानेबूझे कहीं वैसी विकृत सोच अवचेतन मन में तो नहीं बैठी हुई है। पुराण से प्राप्त आम धारणा के अनुसार महादेव शिव बिना कुलपरम्परा वाले एक भूतिया किस्म के आदमी थे, जिनको पति रूप में पाने के लिए पार्वती कई जन्मों तक घरपरिवार को छोड़कर भटकती रही। पति-पत्नि के परस्पर प्रेम को परवान चढ़ाने के लिए कुछ हद तक ऐसा पागलपन ठीक भी है, पर वह भी कुछ जरूरी शर्तों के साथ ही पूरा सफल होता है, और वैसे भी अति तो कहीं भी अच्छी नहीं है, ख़ासकर उस कौम के व्यक्ति के साथ तो बिल्कुल भी संबंध अच्छा नहीं है, जिनके तथाकथित लवजिहाद से जुड़े जालिमपने और जाहिलियत के उदाहरण आए दिन मिलते रहते हैं। सब पता होते हुए भी बारम्बार गलती करना तो ऐसा लगता है कि या तो परिवार में बच्चों को सही व संस्कारपूर्ण शिक्षा नहीं दी जा रही या ऐसी लड़कियों के ऊपर जादूटोना कर दिया गया है, या यह हिन्दुओं के पवित्र और ज्ञानविज्ञान से भरे शास्त्रों और पुराणों को बदनाम करने की एक सोचीसमझी और बहुत बड़ी साजिश चल रही है। कई लोग सख्त कानून की कमी को भी मुख्य वजह बता रहे हैं। कुछ लोग विकृत दूरदर्शन, ऑनलाइन व बॉलीवुड कल्चर को भी बड़ी वजह मानते हैं। कई लोग लिव इन रिलेशनशिप और डेटिंग एप्स को दोष दे रहे हैं। इससे हिंदु पुरुषों को भी शिक्षा लेनी चाहिए और महिलाओं की अपेक्षाओं पर खरा उतरने की कोशिश करनी चाहिए। जिसके अंदर ध्यान-कुंडलिनी चित्र नहीं है, यदि वह भी यौनतंत्र का अभ्यास करे, तो उसका हाल

भी अंधक जैसा हो सकता है, जैसा आपने ऊपर पढ़ा, फिर यदि जिसको यौनतंत्र का कखग भी पता नहीं, यदि वह यौनसंबंधों के मामले में मनमर्जी करे, तो उसका उससे भी कितना बुरा हाल हो सकता है, यह उपरोक्त हाल की घटना से प्रत्यक्ष देखने को मिल रहा है।

प्रेमरोग से बचने का बेजोड़ उपाय

दोस्तों, इस समस्या का हल भी है। सौभाग्य से आज "शरीरविज्ञान दर्शन~एक आधुनिक कुंडलिनी तंत्र(एक योगी की प्रेमकथा)" नामक पुस्तक ऑनलाइन और ऑफलाइन दोनों तरह से उपलब्ध है। यह ईबुक के रूप में भी और प्रिंट पुस्तक के रूप में भी उपलब्ध है। इसमें ऐसा लगता है कि शिवपुराण का विवेचन आधुनिक शैली में किया गया है, जो हर किसी को समझ आ जाए, और उसके बारे में गलतफहमी दूर हो जाए। यह सत्य जीवनी और सत्य घटनाओं पर आधारित है। इसमें आधारभूत यौनयोग पर सामाजिकता के साथ प्रकाश डाला गया है। इस पुस्तक में स्त्री-पुरुष संबंधों का आधारभूत सिद्धांत भी छिपा हुआ है। यदि कोई प्रेमामृत का पान करना चाहता है, तो इस पुस्तक से बढ़िया कोई भी उपाय प्रतीत नहीं होता। इस पुस्तक में प्रेमयोगी वज्र ने अपने अद्‌वितीय आध्यात्मिक व तांत्रिक अनुभवों के साथ अपनी सम्बन्धित जीवनी पर भी थोड़ा प्रकाश डाला है। इस उपरोक्त "शरीरविज्ञान दर्शन" पुस्तक को एमाजोन डॉट इन पर एक गुणवत्तापूर्ण व निष्पक्षतापूर्ण समीक्षा में पांच सितारा, सर्वश्रेष्ठ, सबके द्‌वारा अवश्य पढ़ी जाने योग्य व अति उत्तम (एक्सेलेंट} पुस्तक के रूप में समीक्षित किया गया है। गूगल प्ले बुक की समीक्षा में भी इसे फाईव स्टार व शांतिदायक (कूल) आंका गया है। कुछ गुणग्राही पाठक तो यहाँ तक कहते हैं कि अगर इस पुस्तक को पढ़ लिया तो मानो जैसे सबकुछ पढ़ लिया। आशा है कि पुस्तक पाठकों की अपेक्षाओं पर खरा उतरेगी।

कुंडलिनी योग को ही गंगा अवतरण की कथा के रूप में दिखाया गया है

अश्वमेध यज्ञ साक्षीपन साधना या विपासना का अलंकारिक शैली में लिखा रूप प्रतीत होता है

दोस्तों, हिन्दु दर्शन में गंगा के अवतरण की एक प्रसिद्ध कथा आती है। क्या हुआ कि राजा सगर के साठ हजार पुत्र थे। एक बार वे अश्वमेध यज्ञ करने लगे। यज्ञ के अंत में यज्ञ का घोड़ा छोड़ा गया। देवराज को डर लगा कि अगर राजा सगर का वह सौवां अश्वमेध यज्ञ सफल हो गया तो सगर को उसका इंद्र का पद मिल जाएगा। इसलिए उसने घोड़े को चुराकर पाताल लोक में कपिल मुनि के आश्रम के बाहर बाँध दिया। सगरपुत्रों ने समझा कि घोड़े को कपिल मुनि ने चुराया था। इसलिए वे उन्हें अपशब्द कहने लगे। इससे जब कपिल मुनि ने आँखें खोलीं तो वे उनसे निकले तेज से खुद ही भस्म हो गए। फिर इससे दुखी होकर राजा सगर कपिल मुनि से क्षमा मांगने लगे और अपने पुत्रों के उद्धार का उपाय पूछने लगे। फिर उन्होंने गंगा नदी से उनका उद्धार होने की बात कही। फिर इतना बड़ा काम कोई नहीं कर सका। सगर के बाद की कई पीढ़ियों के बाद जन्मे भागीरथ ने ब्रह्मा से वरदान में माँ गंगा को माँगा और शिव से उसे जटा में धारण करने की प्रार्थना की। उनकी इच्छा पूरी हुई और गंगा नदी ने उन भस्मित सगर पुत्रों की राख के ऊपर से गुजर कर उनका उद्धार किया।

गंगा नदी के जन्म की कथा का कुंडलिनीविज्ञान आधारित विश्लेषण

राजा सगर संसार-सागर का प्रतीक है। मतलब संसार में आसक्त आदमी। साठ हजार पुत्र हजारों इच्छाओं व भावनाओं के प्रतीक हैं। अश्वमेध यज्ञ का

मतलब इन्द्रियों का दमन है। मेध का मतलब बलि या वध होता है। अश्व की बलि मतलब इन्द्रियों की बलि। अगर बाह्य इन्द्रिय रूपी अश्व की बलि अवचेतन मन रूपी हवनकुण्ड में दी जाए और उससे दबे हुए विचारों को उघाड़ने के रूप में अग्नि प्रज्वलित की जाए तो स्वाभाविक है कि उससे मुक्ति रूपी स्वर्ग मिलेगा। उस यज्ञ से देवता प्रसन्न होते हैं क्योंकि पूरे शरीर को देवताओं ने ही बनाया है और वे ही उसे नियंत्रित करते हैं, जैसे कि आँख को सूर्य देव, भुजाओं को इंद्र आदि। इससे परमात्मा-निर्देशित देवताओं का उद्देश्य पूरा होता है, क्योंकि बारबार के जन्ममरण आदि के दुःख से जीव को मुक्ति दिलाकर उसे अपना सर्वोत्तम पद प्रदान करना ही जीवविकास के पीछे मुख्य वजह प्रतीत होती है। इस उद्देष्य की पूर्ति से देवताओं को शक्ति मिलती है। इसीलिए कहा गया है कि यज्ञ से देवता प्रसन्न होते हैं और वर्षा आदि उचित समय पर करवाकर धनधान्य में वृद्धि करते हैं। प्रत्यक्ष लाभ यह तो होता ही है कि लोगों के बीच आपसी मनमुटाव नहीं रहता और एकदूसरे से प्रेम और सहयोग बना रहता है, जिससे सकारात्मक विकास होता है। एकबार ऐसा यज्ञ करने से काम नहीं चलता। यज्ञ पूरी उम्र भर लगातार करते रहना पड़ता है। यह अवचेतन मन बहुत गहरे और आकर्षक कुएँ की तरह है, जिससे बाहर निकला विचारों का कचरा फिर से उसमें गिरता रहता है, हालांकि फिर ऊपर ही रहता है, और बारम्बार के प्रयास से स्थायी रूप से बाहर निकल जाता है। हो सकता है कि किसी वार्षिक उत्सव की तरह साल में एक बार विचारों के कचरे को विस्तार से बाहर निकालने की जरूरत हो। उसे अश्वमेध यज्ञ कहते हों। इसीलिए सौ साल की पूरी उम्र में सौ यज्ञ हुए। सौवां यज्ञ न होने से जीवन के अंतिम वर्ष में पैदा हुए विचारों और भावों का कचरा अवचेतन मन में दबा रह जाता हो, जो आदमी को मुक्त न होने देता हो। हमारी दादी माँ हमें एक दंतकथा सुनाया करती थी। एक स्वर्ग को जाने वाली रस्सी थी। उस पर सावधानी से चलते हुए लोग स्वर्ग जाया करते थे। एक बार एक बुढ़िया एक योगी को उस पर जाते हुए देख रही थी। उसने योगी को आवाज लगाई कि उसे भी साथ ले चल। योगी को उस पर दया आ गई और उसका हाथ पकड़कर उसे भी रस्सी पर चलाने लगा। पर योगी ने

एक शर्त रखी कि वह पीछे मुड़कर अपने भाई-बंधुओं को उससे बिछड़ने के दुःख में रोते-बिलखते नहीं देखेगी। अगर उसने पीछे देखा तो उसका संतुलन बिगड़ जाएगा और वह वापिस धरती पर गिर जाएगी। बुढ़िया ने उसकी शर्त मान ली। पर रास्ते में उससे रहा नहीं गया, और जैसे ही उसने नीचे को देखा, वह नीचे गिर गई, पर योगी बिना उसकी तरफ देखे आगे निकल लिए। ऐसी दंतकथाओं के बहुत गहरे और ज्ञानविज्ञान से भरे अर्थ होते हैं।

मन की सफाई तो अंततः विपासना से ही होती है, जो एक शांत किस्म का ध्यानयोग है

वैसे कुंडलिनी जागरण, आत्मज्ञान वगैरह-वगैरह से मुक्ति नहीं मिलती। इनसे तो विचारों या कर्मों के दबे कचरे की सफाई में मदद भर मिलती है, अगर कोई लेना चाहे तो। अगर कोई न लेना चाहे तो अलग बात है। इसीलिए आजकल कुंडलिनी जागरण जैसे मस्तिष्क झकझोरने वाले अनुभव का ज्यादा प्रचलन व महत्त्व नहीं रह गया है, अगर सच कहूँ तो। वैसे भी आज के व्यस्त, तकनीकी और अध्ययन से भरे युग में दिमाग़ पर पहले से ही बहुत दबाव है। वह और कितना दबाव झेलेगा जागृति के नाम पर। अधिकांश लोगों को एकांत व शांति तो नसीब होना बहुत मुश्किल है। अत्यधिक मस्तिष्क दबाव से कहीं पार्किंसन, अलजाइमर जैसे लाइलाज मस्तिष्क रोग हो गए तो। पर ये मेरे नहीं कुछ अन्य योगियों के विचार हैं। दरअसल ऐसा होता नहीं अगर अपनी सहनशक्ति की सीमा के अंदर रहकर और सही ढंग से ध्यानयोग या कुंडलिनी जागरण किया जाए। ध्यान से हमेशा लाभ ही मिलता है। यह पैराग्राफ कुछ अन्य लोगों के विचारों को परखने के लिए लिख रहा हूँ। सही अर्थों में आजकल तो शांत विपश्यना अर्थात साक्षीभाव साधना का युग है। वैसे विपासना भी एक ध्यान ही है, शांत, सरल, स्वाभाविक व धीमा ध्यान। अगर भैंस खुद ठीक रस्ते पे जा रही है तो उसे डंडे क्यों मारने भाई। कचरा ही साफ करना है न, तो सीधे जाके कर लो, टेढ़ेमेढ़े रास्ते से क्यों भागना। बाहर स्थित विचारों का कचरा कभी कभार अगर दिख भी जाए तो

भी वह शुद्ध ही होता है क्योंकि उससे लगाव या क्रेविंग पैदा नहीं होता। यह भी कह सकते हैं कि विपासना से आदमी शांत, तनावमुक्त और हल्का हो जाता है, जिससे खुद ही उसका मन कुंडलिनी ध्यान को करता है। उससे और कुंडलिनी जागरण से विपासना में और मदद मिलती है, बदले में विपासना से कुंडलिनी ध्यान और ज्यादा मजबूती प्राप्त करता है। इस तरह से विपासना और कुंडलिनी ध्यान साधना एकदूसरे को बढ़ाते रहते हैं।

ध्यानयोग या ध्यान यज्ञ ही असली यज्ञ है, और इन्द्रियों का दमन ही पशुबलि है

इन्द्रियों को शास्त्रों में घोड़े या पशु की उपमा दी जाती है। पशुपति अर्थात इन्द्रियों का पति भगवान शिव का ही एक नाम है। जैसे पशु का झुकाव आंतरिक आत्मा की बजाय बाहरी दुनिया की तरफ होता है, उसी तरह बाह्य इन्द्रियों का भी। आदमी की उम्र सौ साल होती है। उसके बाद मृत्यु मतलब स्वर्ग की प्राप्ति। स्वर्ग को जीते जी प्राप्त नहीं किया जा सकता। मुक्ति तो देवराज इंद्र के लिए भी स्वर्ग है। इसीलिए इस परम स्वर्ग की प्राप्ति को इंद्र अपना अपमान मानता है कि कोई कैसे उससे और उसके द्वारा नियंत्रित तीनों लोकों से ऊपर उठ सकता है। हालांकि देवताओं के साथ इंद्र भी आदमी की मुक्ति से बल प्राप्त करता है, पर यह अहंकार जो है न, वह अपना भला-बुरा कब देखने देता है। सौवें घोड़े को पाताल में बाँधने का अर्थ है कि इंद्र ने इन्द्रियों की शक्ति को मूलाधार के अंधकार भरे क्षेत्र में स्थापित कर दिया। शरीर इंद्र के द्वारा संचालित है। शरीर की अतिरिक्त शक्ति कुदरती तौर पर खुद ही मूलाधार को चली जाती है, इसीलिए इंद्र से इसका नाम जोड़ा गया है। इतना तो सबको पता ही है कि नाभि चक्र को चली जाती है, इसीलिए जब कोई काम और तनाव न हो तो बहुत भूख लगती है और खाना भी अच्छे से पचता है। उससे शरीर में और शक्ति बढ़ती है। वह वहाँ से स्वाधिष्ठान चक्र को उतरती है क्योंकि शक्ति की चाल की दिशा ऐसी ही है। वहाँ अगर उससे यौनता से संबंधित काम लिया गया तो वह पीठ से दुबारा

ऊपर चढ़कर पूरे शरीर में आनंद के साथ फैल जाती है या बाहर निकल कर बर्बाद हो जाती है। अगर वह काम भी नहीं लिया गया तो वह मूलाधार को उतरकर वहीं पड़ी रहती है। अगर कभी थकान व तनाव देने वाला खूब काम किया जाए तो वह वहाँ से पीठ से होते हुए संबंधित थके हुए अंग तक पहुंच कर उसकी मुरम्मत करती है, नहीं तो वहीं सोई रहती है। मूलाधार में शक्ति का सोया हुआ होना इसलिए भी कहा गया होगा क्योंकि जब हम मन में नींद-नींद का लगातार उच्चारण करते हैं तो शक्ति आगे के चक्रों से नीचे जाते हुए महसूस होती है और वापिस ऊपर नहीं चढ़ती। अगर चढ़ती है, तो एकदम से नीचे उतर जाती है। अगर शक्ति को नीचे आने में रुकावट लग रही हो, तो मस्तिष्क से गले तक तो आ ही जाती है। इसके साथ एकदम से शांति और राहत महसूस होती है, और ऐसा लगता है कि मस्तिष्क दाब और रक्तचाप एकदम से कम हुआ। हरेक चक्र में शक्ति काम करती है, पर मूलाधार में आमतौर पर नहीं, क्योंकि वह शक्ति का शयनकक्ष है। वहाँ शक्ति को जगा कर करना पड़ता है। हरेक चक्र के साथ विभिन्न अंग जुड़े हैं। वैसे तो मूलाधार के साथ भी गुदामार्ग जुड़ा है, पर वह स्वाधिष्ठान से भी जुड़ा है। मुझे लगता है कि मूलाधार वाले सभी काम स्वाधिष्ठान चक्र भी कर लेता है। जागृति का स्थान मस्तिष्क है, इसलिए स्वाभाविक है कि शक्ति मस्तिष्क से जितना ज्यादा दूर होगी, वह वहाँ उतनी ही ज्यादा सोई हुई होगी। शास्त्रों में नाभि चक्र को यज्ञ कुंड भी कहा जाता है जहाँ भोजन रूपी आहुति जलती रहती है। इसका यह मतलब नहीं कि बाहरी या भौतिक स्थूल यज्ञ की जरूरत नहीं। दरअसल बाहरी यज्ञ भीतरी कुंडलिनी यज्ञ को प्रेरित भी करता है। समारोह आदि में भौतिक हवन यज्ञ करते हुए मुझे कुंडलिनी की क्रियाशीलता महसूस होती है। हाँ इतना जरूर किया जा सकता है कि भौतिक यज्ञ के नाम पर भौतिक संसाधनों का बेवजह दुरुपयोग न हो।

शक्ति नीचे से ऊपर चढ़ती है, पर अवचेतन मन का निवास मूलाधार और स्वाधिष्ठान पर होने के कारण वह सहस्रार से नीचे जाते हुए दिखाई गई है

मूलाधार में कपिल मुनि का आश्रम मतलब वहाँ मूलाधर चक्र का पवित्र अधिष्ठाता देवता है। उसे अपशब्द कहना मतलब मूलाधार को अपवित्र मानना। सगर का साठ हजार पुत्र उसे ढूंढने भेजना मतलब आदमी द्वारा अपनी खोई हुई शक्ति अर्थात इन्द्रिय शक्ति अर्थात कुंडलिनी शक्ति को प्राप्त करने के लिए हजारों इच्छाओं व भावनाओं को खुले छोड़ देना मतलब संसार में हर तरफ अपना डंका बजाने की कोशिश करना। शास्त्र कहते हैं कि जैसे जंगल में भटकने वाले को जल्दी रत्न मिल जाता है, उसी तरह दुनिया में भटकने वाले को जल्दी ही मूलाधार और उसमें सोई शक्ति मिल जाती है। यह बहुत बड़ी शिक्षा है, जिसके अनुसार दुनिया में भटकते हुए थकने के बाद आदमी बाह्य इन्द्रियों से ऊबकर अवचेतन मन में डूबने लगता है। पर यह तभी होता है अगर आदमी अद्वैत व अनासक्ति के साथ दुनिया में जीवनयापन कर रहा हो, नहीं तो दुनिया के लोग उसका अवचेतन मन में भी पीछा नहीं छोड़ते और उसे वहाँ से भी बाहर खींच लाते हैं और उसे ध्यानसाधना नहीं करने देते। इससे साफ है कि आम आदमी को आध्यात्मिक तरक्की के लिए अद्वैत और अनासक्ति का भाव बना के रखना बहुत ज्यादा जरूरी है। जैसे इस कथा में पाताल समुद्र से नीचे है और समुद्र से होकर ही वहाँ तक रास्ता जाता है, उसी तरह मूलाधार चक्र भी सभी दुनियावी (शास्त्रों में संसार को भी समुद्र कहा गया है) चक्रों के नीचे है, और पाताल की तरह ही सुषुप्त लोक जैसा है। तभी तो अवचेतन कह रहे इसको। वहाँ मुनि कपिल को देखना मतलब सांख्ययोग व जैन धर्म के मूल प्रवर्तक को ध्यान रूप में देखना। जैनी मुनि भी दिगंबर अर्थात नग्न अवस्था में रहते हैं। मुनि को अपशब्द कहते हुए उन पर चोरी का इल्जाम लगाना मतलब उनको पता चलना कि इस ध्यान चित्र ने ही शक्ति को नीचे खींच कर अपने पास कैद किया है। किसी चीज का अपमान करके आदमी उससे भरपूर फायदा नहीं

उठा सकता।अगर मूलाधार को छि-छि करते रहोगे, तो उस पर कुंडलिनी छवि का ध्यान करके उसे जगाओगे कैसे। उस छवि पर ही अगर ऐसा इल्जाम लगाओगे कि इसने मेरी सारी शक्ति छीन ली है, तो उसे और शक्ति कैसे दोगे। अतिरिक्त या अन्यूजड शक्ति तो उसमें जाएगी ही, अनजाने में और वहाँ सुषुप्त पड़ी रहेगी। वह शक्ति वहाँ तभी अवचेतन मन को उघाड़ पाएगी, यदि उसे ऐसा करने का मौका दोगे और उसके साथ सहयोग करोगे। तभी तो आपने देखा होगा कि सेक्सी किस्म के लोग बहुत गहराई से देखने और सोचने वाले होते हैं। यह इसलिए क्योंकि उनके मन में ज्यादा कचरा नहीं होता। वे अपनी मूलाधार स्थित यौन शक्ति से मन के कचरे को लगातार साफ करते रहते हैं, और दूसरी तरफ साफसुथरे होने का और यौनता से दूरी रखने का दिखावा करने वाले अंदर से अवचेतन मन के कचरे से भरे होते हैं। सेक्सी आदमी स्पष्टवादी और तेज दिमाग लिए होते हैं। उनका ध्यान शरीर के दूसरे क्षेत्रों की बजाय मूलाधार क्षेत्र में ज्यादा टिका होता है। हालांकि चेहरा और मूलाधार आपस में जुड़े होते हैं। मुनि की दृष्टि रूपी क्रोधाग्नि से उन साठ हजार पुत्रों का भस्म होना मतलब मन के सभी विचारों और भावनाओं का मूलाधार में शक्ति के साथ सो जाना। मतलब कुंडलिनी शक्ति अवचेतन मन को साथ लेकर सुषुप्तावस्था में चली गई। सगर वंश में कई पीढ़ियों के बाद भागीरथ नामक एक महापुरुष हुआ जो गंगा को लाने में स्मर्थ हुआ जिसने सभी सगरपुत्रों को जीवित करके मुक्त कर दिया मतलब व्यक्ति कई जन्मों के बाद इस काबिल हुआ कि सुषुम्ना को जागृत करके कुंडलिनी जागरण को प्राप्त कर सका जिससे अवचेतन मन (पाताल लोक समतुल्य) में दबे हुए विचार और भावनाएं आनंद, अद्वैत व आनंद के साथ अभिव्यक्त होते गए और ब्रह्म में विलीन होते गए। भागीरथ ने घोर तपस्या की मतलब कुंडलिनी योग किया। ब्रह्मा ने प्रसन्न होकर वर दिया मतलब कुंडलिनी सहस्रार में क्रियाशील हो गई। सहस्रार चक्र भी कमल की तरह है और ब्रह्मा भी कमल पर बैठते हैं। कैलाश पर रहने वाले शिव ने गंगा को अपनी जटाओं में धारण किया मतलब सुषुम्ना नाड़ी में बहती हुई चेतना रेखा सहस्रार में समाहित हो जाती है। सहस्रार चक्र बालों से भरे हुए सिर के अंदर

ही होता है। कई जगह सहस्रार को कैलाश पर्वत की उपमा दी जाती है। वह गंगा स्वर्ग लोक से आई मतलब सुषुम्ना में बहती हुई शक्ति से सहस्रार चक्र दिव्यता अर्थात दिव्य लोक के साथ जुड़ जाता है जिसे कुंडलिनी जागरण के दौरान का अनुभव कहते हैं। दरअसल अवचेतन मन का स्थान भी मस्तिष्क ही है, पर क्योंकि वह मुलाधार से ऊपर आती सुषुम्ना-शक्ति से जागता है, इसलिए कहा जाता है कि वह मूलाधार चक्र में शक्ति के साथ सुषुप्तावस्था में फंसा हुआ था। इसी तरह अगर अवचेतन मन को ध्यान लगाकर उघाड़ने लगो तो मूलाधार और सुषुम्ना क्रियाशील होने लगते हैं। मतलब ये तीनों आपस में जुड़े हैं। इसीलिए इस मिथकीय कहानी में कहा गया है कि गंगा मतलब सुषुम्ना शक्ति स्वर्ग मतलब जागृति के सर्वव्यापी व सर्वानन्दमयी अनुभव से कैलाश मतलब मस्तिष्क को आई, वहाँ से नीचे हिमालय मतलब रीढ़ की हड्डी से उतरते हुए महासागर अर्थात दुनिया अर्थात विभिन्न चक्रों से गुजरते हुए पाताल लोक मतलब मूलाधार चक्र में पहुंची। होता उल्टा है दरअसल, मतलब शक्ति नीचे से ऊपर चढ़ती है। फिर कहते हैं कि भागीरथ गंगा के साथ-साथ चलता रहा, और जहाँ भी उसका मार्ग अवरुद्ध हो रहा था, वहाँ-वहाँ वह उस अवरोध को हटा रहा था। यह ऐसे ही है जैसे आदमी बारीबारी से चक्रों पर ध्यान लगाते हुए शक्ति के अवरोधों को दूर करता है। चक्र-ब्लॉक ही वे अवरोधन हैं। तथाकथित अंतर्राष्ट्रीय भगोड़े इस्लामिक विद्वान और आतंकवाद के आरोपों से घिरे जाकिर नईक जैसे लोगों को यह ब्लॉग जरूर फॉलो करना चाहिए, क्योंकि वह हिंदु शास्त्रों के मिथकीय पक्ष को तो उजागर करके दुष्प्रचार से उन्हें बदनाम करने की कोशिश करते हैं, पर उनके वैज्ञानिक पक्ष से अपरिचित हैं।

कुंडलिनी योग ही सभी धर्मों की रीढ़ है, इसपर आधारित इनका वैज्ञानिक विश्लेषण इनके बीच बढ़ रहे अविश्वास पर रोक लगा सकता है

आक्रमणकारियों से शास्त्रों की रक्षा करने में ब्राह्मणों की मुख्य भूमिका थी

कई बार कट्टर किस्म के लोग छोटीछोटी विरोधभरी बातों का बड़ा बवाल बना देते हैं। अभी हाल ही में दिल्ली के जवाहर लाल यूनिवर्सिटी (जेएनयू) की दीवारों पर लिखे ब्राह्मण विरोधी लेख इसका ताज़ा उदाहरण है। यह सबको पता है कि यह तथाकथित पिछड़े वर्णों ने नहीं लिखा होगा। हिंदु समुदाय के बीच दरार पैदा करने के लिए यह तथाकथित निहित स्वार्थ वाले बाहरी लोगों की साजिश लगती है। ऐसा सैंकड़ों सालों से होता चला आ रहा है। दरअसल यह सामाजिक कर्मविभाजन था, जिसे वर्ण व्यवस्था कहते थे। इसमें सभी बराबर होते थे, केवल यही विशेष बात होती थी कि वंश परम्परा से चले आए काम को करना ही अच्छा समझा जाता था, जैसे व्यापारी का बेटा भी अपने पिता के व्यापार को संभालता है। जबरदस्ती कोई नहीं थी, क्योंकि शूद्र वर्ण के बाल्मीकि ने रामायण लिखी है, विश्वामित्र क्षत्रिय से ब्राह्मण बन गए थे। ऐसे बहुत से उदाहरण हैं। हालांकि ज्यादातर लोग अपने ही वर्ण का काम सँभालने में ज्यादा गौरव, सम्मान और गुणवत्तापूर्णता महसूस करते थे। जैसे वर्णमाला के वर्ण अपना अलग-अलग विशिष्ट रूप-आकार लिए होते हैं, वैसे ही समाज के लोग भी अलग-अलग रूपाकार के कर्म करते हैं। अगर कर्म के अनुसार ही किसी का स्वभाव बन जाता हो, तो यह अलग बात है, पर ऐसा कभी नहीं हुआ कि सबको पंक्ति में खड़ा किया गया और शरीर के रंगरूप के अनुसार विभिन्न किस्म के समूह बनाए गए। वर्ण या वर्णभेद से मतलब रंग या रंगभेद बिल्कुल नहीं है, क्योंकि हरेक वर्ण के लोगों में हरेक किस्म के त्वचा-रंग के लोग मिलेंगे। इसी तरह यह परम्परा विदेशी कास्ट या जाति

परम्परा की तरह भी नहीं है। यह नाम भी इसको गलतफहमी से दिया गया लगता है। रही बात ब्राह्मणों की तो यह बता दूँ कि सबसे कठिन जीवन उन्हीं का होता था। उनको विलासिता भरे जीवन से अपने को कोसों दूर रखना पड़ता था। फिर धनसम्पत्ति किस काम की अगर उसे भोग ही न सको। अधिकांशतः उनकी कमाई संपत्ति औरों के या परमार्थ के काम ही आती थी। दुनिया में ठगों की कमी न आज है, न पुराने समय में थी। पहली बात तो उनके पास सम्पत्ति होती ही नहीं थी। भिक्षाजीवी की तरह वे दक्षिणा में मिले मामुली से मेहनताने से अपना और अपने परिवार का गुजारा मुश्किल से चलाते थे। फिर बोलते कि राजा उन्हें बहुत सारी धनसंपत्ति दान में दिया करते थे। राजा भी कितनों को देंगे। कर वसूलने वाले इतनी आसानी से दान दिया करते तो आज कोई गरीब न होता। कुछेक ब्राह्मणों को अगर मुहमाँगा दिया गया होगा तो उसको हमेशा गिनते हुए सब पर तो लागू नहीं करना चाहिए। मुफ्त में तो राजा भी नहीं देते थे। जब उन्हें ब्राह्मण से कोई बड़ा ज्ञान प्राप्त होता था, तभी वे अपने आध्यात्मिक कल्याण के लिए दान देते थे। कहावत भी है कि फ्री लंच का अस्तित्व ही नहीं है। मैं ऐसा इसलिए लिख रहा हूँ, क्योंकि मुझे पता है। मेरे दादा खुद एक आदर्श हिंदु पुरोहित थे, जो लोगों के घरों में पूजापाठ किया करते थे। मैंने उनके साथ काम करते हुए खुद महसूस किया है कि आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करना और उसे दुनिया में बाँटना कितना मुश्किल और आभारहीन माने थैंकलेस काम है। ये काम ही ऐसा है, इसमें लोगों की गल्ती नहीं है। ये बातें अधिकांश लोगों को अब पुनः समझ में आने लग गई हैं। इसीका परिणाम है कि ब्राह्मणों के खिलाफ उक्त भड़काऊ लेखन के विरोध में सोशल मीडिया में "हैशटैग ब्राह्मण लाइफ मैटर्स" ट्रैण्ड किया। इसी तरह "हैशटैग मैं भी ब्राह्मण हूँ" भी ट्विटर पर काफी ट्रैण्ड रहा, जब क्रिकेटर सुरेश रैना के अपने आप को ब्राह्मण कहने का बहुत से वामपंथी किस्म के लोगों ने विरोध किया था। हम ये नहीं कह रहे कि सभी ब्राह्मण आदर्श हैं। पर इससे ब्राह्मणवाद को गलत नहीं ठहरा सकते। ब्राह्मणवाद ज्ञानवाद, बुद्धिवाद या अध्यात्मवाद का पर्याय है। अगर कहीं पर चिकित्सक निपुण नहीं हैं, तो उससे चिकित्सा विज्ञान झूठा नहीं हो

जाता। आज जो हम इस ब्लॉग पर आध्यात्मिक ज्ञान से भरी जिन रहस्यवादी कथाओं के विश्लेषण का आनंद लेते हैं, वे अधिकांशतः ब्राह्मणों ने ही बनाई हैं। इन्हें आजतक सुरक्षित भी इन्होंने ही रखा है। अगर ब्राह्मण हमलावरों के आगे झुक जाते तो न तो हिंदु धर्म का नामोनिशान रहता और न ही इस धर्म के रहस्यमयी ग्रंथों का। क्षत्रिय भी किसके लिए लड़ते, अगर ब्राह्मण ही डर के मारे धर्म बदल देते। किसी पर मनगढंत इल्जाम लगाना आसान है, पर अपने अहंकार को नीचे रखकर सच्ची प्रशंसा करना मुश्किल। फिर कहते हैं कि ब्राह्मण विदेशों से यहाँ आकर बसे। एक तो इसके स्पष्ट प्रमाण नहीं हैं, हमला करके आने के तो बिल्कुल भी नहीं, और अगर मान लो कि वे आए ही थे, तो यहाँ प्रेम से घुलमिलकर यहाँ की सरजमीं के सबसे बड़े रखवाले और हितैषी सिद्ध हुए। इसमें बुरा क्या है। हाँ, यह जरूर है कि जिस कुंडलिनी योग के आधार पर बने शास्त्रों और उनकी परम्पराओं का वे निर्वहन करते हैं, उसे वे समझें, प्रोत्साहित करें और हठधर्मिता छोड़कर उसके खिलाफ जाने से बचें।

विश्व के सभी धर्म और सम्प्रदाय कुंडलिनी योग पर ही आधारित हैं

शिवपुराण में भगवान शिव कहते हैं कि वे विभिन्न युगों में विभिन्न योगियों का अवतार लेकर उन-उन युगों के वेदव्यासों की वेद-पुराणों की रचना में सहायता करते हैं। वे लगभग 5-6 पृष्ठ के दो अध्यायों में यही वर्णन करते हैं कि किस युग में कौन वेद व्यास हुए, उन्होंने किस योगी के रूप में अवतार लेकर उनकी सहायता की और उनके कौन-कौन से शिष्य हुए। इससे स्पष्ट हो जाता है कि ध्यान योग माने कुंडलिनी योग ही सनातन धर्म की रीढ़ है। मुझे तो अन्य सारे धर्म सबसे प्राचीन सनातन धर्म की नकल करते हुए जैसे ही लगते हैं। इससे यह भी सिद्ध हो जाता है कि सभी धर्म योग पर ही आधारित हैं, और योग को सरल, लोकप्रिय व व्यावहारिक बनाने का काम करते हैं। जब सबसे योग ही हासिल होता है, तो क्यों न सीधे योग ही किया

जाए। अन्य धर्म भी यदि साथ में चलते रहे, तो भी कोई बुराई नहीं है, बल्कि योग के लिए फायदेमंद ही है।

ध्यान ही सबकुछ है

साथ में महादेव शिव कहते हैं कि ध्यान के बिना कुछ भी संभव नहीं है। वे कहते हैं कि केवल ध्यान से ही मोक्ष मिल सकता है, यदि ध्यान न किया तो सारे शास्त्र और वेदपुराण निष्फल हैं।

नए धर्म व नए योग स्टाइल बदलते दौर के साथ अध्यात्म को ढालने के प्रयास से पैदा होते रहते हैं

जमाने के अनुसार सुधार धर्म में भी होते रहने चाहिए। मतलब सुधार का मौका मिलता रहना चाहिए, यह जनता पर निर्भर करता है कि सुधार को स्वीकार करती है या नहीं। हालांकि इसके साथ षड्यंत्र से भी बचना जरूरी होगा, क्योंकि कई लोग दुष्प्रचार आदि तिकड़में लगाकर किसी घटिया सी रचना को भी बहुत मशहूर कर देते हैं। इसके लिए कोई निष्पक्ष संस्था होनी चाहिए जो रचनाओं की सही समीक्षा करके जनता को अवगत करवाती रहे। कट्टर बनकर यदि सुधार का मौका ही नहीं दोगे, तो धर्म जमाने के साथ कंधा से कंधा मिला कर कैसे चल पाएगा। सुधार का मतलब यह नहीं है कि पुरानी रचनाओं को नष्ट किया जाए। सम्भवतः इसी डर से सुधार नहीं होने देते कि इससे पुरानी रचना नष्ट हो जाएगी। पर यह सोच मिथ्या और भ्रमपूर्ण है। नए सुधारों से दरअसल पुरानी रचनाओं को बल मिलता है क्योंकि इनसे वे बाप का दर्जा हासिल करती हैं। आइंस्टीन के गुरुत्वाकर्षण के नए सिद्धांत से न्यूटन का पुराना सिद्धांत नष्ट तो नहीं हुआ। गुरुत्वाकर्षण तो वही है, बस उसको समझने के दो अलगलग तरीके हैं। इसी तरह ध्यान व अद्वैत को अध्यात्म की मूल विषयवस्तु मान लो। इसको प्राप्त कराने के लिए ही विभिन्न पुराण, मंत्र व पूजा पद्धतियाँ बनी हैं। हो सकता है कि इनमें

सुधार कर के जमाने के अनुसार नई रचनाएं बन जाएं, जो इनसे भी ज्यादा प्रभावशाली हों, और ज्यादा लोगों के द्वारा स्वीकार्य हों। शरीरविज्ञान दर्शन भी एक ऐसा ही छोटा सा प्रयास है, हालांकि उसमें भी विकास की गुंजाईश है। मेरा व्यक्तिगत अनुभवरूपी शोध इसके साथ जुड़ा है। मतलब यह ऐसा दर्शन नहीं कि मन में आया और बना दिया। जब मुझे इसकी मदद से जागृति का अनुभव हुआ, तभी इस पर प्रमाणिकता की मुहर लगी। यह अलग बात है कि साथ में उस सनातन धर्म वाली सांस्कृतिक जीवनचर्या का भी योगदान रहा होगा, जिसमें मैं बचपन से पला-बढ़ा हूँ। पर इतना जरूर लगता है कि कम से कम पचास प्रतिशत योगदान शरीरविज्ञान दर्शन का रहा ही होगा। अब आम जीवन में इतना शुद्ध शोध तो कहाँ हो सकता है कि अन्य सभी सहकारी कारणों को ठुकरा कर केवल एक ही कारण के असर को परखा जाए। दरअसल एक मेरे जैसे आम आदमी के पास इतना समय नहीं होता कि ऐसे सुधारों और विकास के लिए विस्तृत शोध किया जाए। जैसे ज्ञानविज्ञान के अन्य क्षेत्रों में विशेषज्ञ व अनुभवशाली शोध-वैज्ञानिकों की सेवा ली जाती है, वैसी ही अध्यात्म के क्षेत्र में भी ली जा सकती है। इसमें बुरा क्या है। पर समस्या यह है कि समर्पित शोधार्थी से ज्यादा पार्ट टाइम या हॉबी शोधार्थी ज्यादा अच्छा काम कर सकते हैं। मतलब कि अध्यात्म रोजाना के व्यवहार से ज्यादा जुड़ा होता है। एकाकीपन के शोध से व्यावहारिक नतीजे नहीं निकलते। यह भी समस्या है कि शोध के लिए जागृत व्यक्ति कहाँ से लाए। परीक्षा लेने वाले भी जागृत ही चाहिए। जागृत व्यक्ति को ही असली लक्ष्य का पता होता है। जिसको लक्ष्य की ही पहचान नहीं है, वह उसके लिए शोध कैसे करेगा। आज तक कोई मशीन नहीं बनी जो किसी की जागृति का पता लगा सके। अध्ययन के बल पर कुछ टोटके तो कोई भी ईजाद कर सकता है, पर ज्यादा असली व प्रामाणिक तो जागृत व्यक्ति का शोध ही माना जाएगा।

पुराण व अन्य धर्म संबंधित लौकिक साहित्य शहद के साथ मिश्रित की हुई कड़वी दवाई की तरह काम करते हैं

पिछली पोस्ट में मैं बता रहा था कि कैसे राजा भागीरथ गंगा नदी के प्रवाह में आई रुकावटों को हटा रहा था। हमारे दादा उस बात को शास्त्रों का हवाला देते हुए ऐसे कहा करते थे कि भागीरथ हाथ में कुदाली को लेकर गंगा के आगे-आगे चलता रहा और उसके जलप्रवाह के लिए जमीन खोद कर रास्ता बनाता रहा, जैसे कोई किसान सिंचाई की कूहल के लिए रास्ता मतलब चैनल बनाता है। मत भूलो, शरीर में शक्ति संचालन मार्ग को भी अंग्रेजी में चैनल ही कहते हैं। शब्दावली में भी कितनी समानता है। वे खुद एक छोटे से किसान भी थे। वैसे तो आलोचक विज्ञानवादी को यह बात अजीब लग सकती है, पर इसमें एक गहरा मनोवैज्ञानिक सबक छिपा हुआ है। यह बात मनोरंजक और हौसला बढ़ाने वाली है। साथ में यह अध्यात्मवैज्ञानिक रूप से बिल्कुल सत्य भी है, जैसा कि पिछली पोस्ट में दिखाया गया है। बेशक यह बात हमें स्थूल रूप में समझ नहीं आती थी, पर हमारे अवचेतन मन पर एक गहरा प्रभाव छोड़ती थी। उसी का परिणाम है कि कालांतर में हमारे को खुद ही यह रहस्य अनुभव रूप में समझ आया। पौराणिक ऋषि बहुत बड़े व्यावहारिक मनोवैज्ञानिक होते थे। वे जानते थे कि अनपढ़ और बाह्यमुखी जनता को सीधे तौर पर गहन आध्यात्मिक तकनीकें नहीं समझाई जा सकतीं, इसीलिए वे उन तकनीकों को व्यावहारिक, रहस्यात्मक और मनोरंजक तरीके से प्रकट करते थे, ताकि वे अवचेतन मन पर गहरा असर डालती रहें, जिससे आदमी धीरेधीरे उनकी तरफ बढ़ता रहे। सहज पके सो मीठा होय। एकदम से पकाया हुआ फल मीठा नहीं होता। ऐसी मिथकीय कथाओं पर लोगों की अटूट आस्था का ही परिणाम है कि वे आज तक समाज में प्रचलित हैं। किसीसे अगर पूछो कि उसे इन कथाओं से क्या लाभ मिला, तो वह पुख्ता तौर पर कुछ नहीं बता पाएगा, पर उन्हें पूजनीय व अवश्य पढ़ने योग्य जरूर कहेगा। कई कथाएं ऋषियों ने जानबूझ कर ऐसी बनाई हैं कि उनका रहस्योद्घाटन नहीं किया जा सकता। अगर सभी कुछ का पता चल गया तो विश्वास करने के लिए बचेगा क्या। ऋषि विश्वास और सस्पेंस की शक्ति को पहचानते थे। होता क्या है कि जब कुछ कथाओं के रहस्य से परदा उठता है, तो अन्य कथाओं की सत्यता पर भी विश्वास हो जाता है।

वैसे गैरजरूरी कथाओं को उजागर करना ही नामुमकिन लगता है। जो कथा-रहस्य जितना ज्यादा जरूरी है, उसे उजागर करना उतना ही आसान है। वैसे धर्म के बारे ज्यादा कहने का मुझे बिल्कुल शौक नहीं है, पर कई बारे सीमित रूप में कहना पड़ता है, क्यकि अध्यात्म को धर्म के साथ बहुत पक्के से जोड़ा गया है, और कई बारे इनको अलग करना मुश्किल हो जाता है।आज जब विभिन्न धर्मों के बीच इतना अविश्वास बढ़ गया है, तो यह जरूरी हो गया है कि उनका आध्यात्मिक व वैज्ञानिक रूप में वर्णन करके विरोधियों की शंका दूर कर दी जाए।

कुंडलिनी ऊर्जा इड़ा और पिंगला नाड़ियों से पकड़ में आने के बाद ही सुषुम्ना में आसानी से प्रविष्ट हो पाती है

मित्रों, मैं पिछले से पिछली पोस्ट में बता रहा था कि गंगा नदी का अवतरण कैसे हुआ। राजा सगर के साठ हजार पुत्र हजारों वासनाओं के प्रतीक हैं। सगर का मतलब संसार सागर मतलब शरीर में डूबा हुआ आदमी। हरेक जीवात्मा अपने शरीर रूपी संसार का राजा ही है। सारा संसार इस शरीर में ही है। सागर शब्द से ही सगर शब्द बना है। कहते हैं कि राजा सगर की पत्नि के गर्भ से एक घड़े जैसी आकृति पैदा हुई थी। उसमें चींटियों की तरह साठ हजार बच्चे थे। वे बाहर निकलकर बढ़ते गए और कालांतर में साठ हजार पूर्ण मनुष्य बन गए। मस्तिष्क भी तो घड़े जैसा ही है, जिसमें बहुत सूक्ष्म वासनाएं हजारों की संख्या में रहती हैं। इन्द्रियों के माध्यम से वे बाहर निकलकर चित्रविचित्र अनेकों रचनाओं व भावनाओं का निर्माण करती हैं, मतलब पूर्ण विकसित मनुष्य की तरह हो जाती हैं। मनुष्य क्या है, भावनामय रूप की एक विशेष अवस्था ही तो है। अनगिनत अवस्थाएं मतलब अनगिनत मनुष्य। महारानी गांधारी से भी इसी तरह सौ कौरव पुत्रों का जन्म हुआ था। हो सकता है कि इसके पीछे भी ऐसा ही कोई रहस्य छुपा हो। प्राइमरी स्कूल की शुरुआती कक्षाओं के दिनों की बात है। एक हिंदी कविता थी, 'कौरव सौ थे पांडव पांच, सगे भाइयों की संतान; पांडव वीर धरम के रक्षक, कौरव को था धन अभिमान'। मैं कक्षा के सभी बच्चों को समझाने की कोशिश करता कि किसी के सौ पुत्र होना असम्भव है, इसलिए 'सौ' की बजाय यह शब्द 'सो' है, मतलब 'जो थे सो थे', पर सभी बच्चे कहते कि गुरुजी ने 'सौ' ही कहा है। मैं उन्हें कहता कि उनसे सुनने में गल्ती हुई है। जब मैंने अपने तरीके से अध्यापक के बोलने पर कविता पढ़ी, तब उन्होंने मुझे सही किया। मुझे आश्चर्य हुआ पर उन्होंने उसकी वैज्ञानिक वजह नहीं बताई, और न ही मैंने पूछने की हिम्मत की। इतना गहरा विश्वास होता था

ऐसी कथाओं पर, हालांकि ऐसा नहीं था कि कोई उसकी देखादेखी असल में भी सौ पुत्र पैदा करने की कोशिश करने लग जाता। हालांकि ऐसी कथाओं का जनसंख्या बढ़ाने में योगदान हो भी सकता है। ऐसी कथाओं में मानसिक छवियों को पुत्र रूप में दर्शाने का प्रचलन रहा है शास्त्रों में। यह अध्यात्मविज्ञान की दृष्टि से सही भी है क्योंकि जिस वीर्य से पुत्र की प्राप्ति होती है वही एक ऊर्जावान या जागृत विचार भी उत्पन्न कर सकता है। हो सकता है कि यदि हम उनके रहस्य समझ जाते, तो वे हमारे मन में वह मनोवैज्ञानिक सस्पेंस बना के न रखतीं, जो आदमी को आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करता रहता है।

प्रभावी व स्पष्ट नाक की तरह नासिका-दृष्टि का आध्यात्मिकता से भरा मनोवैज्ञानिक लाभ

दूसरा हम यह मुद्दा उठा रहे थे कि मूलाधार की शक्ति कैसे अवचेतन मन के कचरे को जलाती रहती है। नाक पर ध्यान बनाते ही किसी भी तनाव व थकान वाले स्थान पर एकदम से शांति मिलती है और अद्वैत के जैसा आनंद अनुभव होता है। मन में साक्षीभाव के साथ दृश्य उभरने लगते हैं, जिससे ऐसा लगता है कि मन का कचरा साफ हो रहा है। सांसों में सुधार होने लगता है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि इससे ऊर्जा चैनल केंद्रीय रेखा में सक्रिय हो जाता है, जिसमें स्वाधिष्ठान व मूलाधार से शक्ति पीठ के रास्ते से ऊपर चढ़कर गोल लूप में प्रवाहित होने लगती है। एकदिन मैं एक निमंत्रण पर निकट की पाठशाला में वार्षिक पारितोषिक वितरण समारोह देखने गया। वहाँ बच्चे बहुत अच्छा रंगारंग कार्यक्रम प्रस्तुत कर रहे थे। उस दौरान यह सब मनोवैज्ञानिक लाभ मुझे बीचबीच में अपनी नाक के ऊपर नीचे की तरफ तिरछी नजर बना कर महसूस हुआ। साथ में नाक के अंदर स्पर्ष करती हवा पर भी ध्यान लगा रहा था। नाई से ताज़ा-ताज़ा शेव करवाई थी और फेस स्क्रब करवाया था, जिससे मूँछ बड़ी और स्पष्ट महसूस हो रही थी। सम्भवतः वह भी नाक की तरफ ध्यान खींच रही थी। हो सकता है कि

मूंछ का प्रचलन इसी आध्यात्मिक लाभ के दृष्टिगत बना हो। लगता है कि बड़ी नाक वाले आदमी की आकर्षकता और सेक्सी लुक के पीछे यही बड़ी नाक और उससे उत्पन्न उपर्युक्त मनोवैज्ञानिक लाभ है। वैसे भी नाक की तरफ ध्यान देता आदमी सुंदर, अंतरमुखी, आध्यात्मिक और अपने आप में संतुष्ट लगता है। सम्भवतः इसीलिए नाक के ऊपर बहुत सी कहावतें बनी हैं, जैसे कि नाक पे दिया जलाना, अपने नाक की परवाह कर, अपनी नाक को ऊँचा रखो, अपनी नाक को बचा, नाक न कटने दे, अपनी नाक मेरे काम में न घुसा आदि-आदि। मुझे यह भी लगता है कि दूरदर्शन को दीवार पर आँखों की सीध में या उससे भी थोड़ा नीचे फिक्स करवाने से जो उसे देखने का ज्यादा मजा आता है, वह इसीलिए क्योंकि उसको देखते समय नाक पर भी नजर बनी रहती है, इससे ज्यादा ऊँचाई पर ऐसा कम होता या नहीं होता और साथ में गर्दन में भी दर्द आती है। कुछ एकसपर्ट तो यहाँ तक कहते हैं कि दूरदर्शन का ऊपरी किनारा आँखों की सीध में होना चाहिए, जैसे कम्प्यूटर मॉनिटर का होता है। साथ में मुझे नींद का मानसिक उच्चारण करने से भी शांति जैसी मिलती थी। नींद के मन में उच्चारण से सांस विशेषकर बाहर निकलती सांस ज्यादा चलती है, इससे सिद्ध होता है कि ऊर्जा एक्सहेलेशन माने निःश्वास से आगे के चैनल से नीचे उतरती है। प्राणायाम करते समय नाक को पकड़ते हुए उसी हाथ की एक अंगुली की टिप से आज्ञा चक्र बिंदु पर संवेदनात्मक दबाव बना कर रखने से भी मुझे शक्ति केंद्रीभूत माने सेन्ट्रलाईज़ड होते हुए महसूस होती है। मुझे तो आज्ञा चक्र और स्वाधिष्ठान चक्र को एकसाथ अंगुली से दबा कर रखने से अपना शरीर एकदम से शक्ति से रिचार्ज होता हुआ महसूस होता है। लगती यह तांत्रिक तकनीक अजीब है, पर बड़े काम की है। साँस अपनी मर्जी से चलने-रुकने दो, शक्ति को अपनी मर्जी से इड़ा या पिंगला या जहाँ मर्जी दौड़ने दो। अंततः वह खुद ही केंद्रीय सुषुम्ना चैनल में आ जाएगी, क्योंकि उसके दो कॉर्नर पॉइंट ऊँगली से जो दबाए हुए हैं, जिनसे पैदा हुई दाब की आनंदमयी सी संवेदना शक्ति को खुद ही सुषुम्ना में धकेल कर गोलगोल घुमाने लगती है। इससे शरीर के उस हिस्से तक पर्याप्त शक्ति आसानी से पहुंच जाती है, जहाँ उसकी जरूरत हो।

जैसे थके हुए दिल तक, बेशक यह उपले शरीर के बाएं हिस्से में है। इसी तरह थकी हुई टांगों में। दरअसल ऊर्जा नाड़ी के उन दो कॉर्नर पॉइंट के बीच में चलती है, बीच रास्ते में वह कोई भी रास्ता अख्तियार कर सकती है। पसंदीदा रास्ता वही होता है, जिसमें कम अवरोध होता है। स्वाभाविक है कि शक्ति की कमी वाला रास्ता ही कम प्रतिरोध वाला होगा, क्योंकि वह शक्ति को अपनी ओर ज्यादा आकर्षित करेगा, और अपनी शक्ति को पूरा करने के बाद आगे भी जाने देगा। कई बार योगासन करते समय जब सांस रोकने से मस्तिष्क में दबाव ज्यादा बढ़ा लगता है, तब आज्ञा चक्र वाला बिंदु नहीं दबाता, सिर्फ नाक पर हल्का सा अवलोकन बना रहता है। उससे मस्तिष्क का दबाव एकदम से कम होकर निचले चक्रों की तरफ चला जाता है। दरअसल सुषुम्ना सीधे वश में नहीं आती। उसे इड़ा और पिंगला से काबू करके वहां से सुषुम्ना में धकेलना पड़ता है। इसीलिए आपने देखा होगा कि कई लोग माथे पर ऊर्ध्वत्रिपुण्ड लगाते हैं। इसमें दोनों किनारे वाली रेखाएं क्रमशः इड़ा और पिंगला को दर्शाती हैं, और बीच वाली रेखा सुषुम्ना को। यह ऐसे ही है जैसे बच्चा सीधा पढ़ने नहीं बैठता, पर थोड़ा खेल लेने के बाद पढ़ाई शुरु करता है। हालांकि सुषुम्ना में शक्ति ज्यादा समय नहीं रहती, कुछ क्षणों के लिए ही टिकती है। वैसे तो इड़ा और पिंगला में भी थोड़े समय ही महसूस होती है, पर सुषुम्ना से तो ज्यादा समय ही रहती है। ऐसे ही जैसे बच्चा पढ़ाई कम समय के लिए करता है, और खेलकूद ज्यादा समय के लिए। और तो और, एकदिन मैं दूरदर्शन पर किसी हिंदु संगठन के कुछ युवाओं को देख रहा था। उनके माथे पर लम्बे-लम्बे तिलक लगे हुए थे। किसी की पतली लकीर तो किसी की चौड़ी। एक सबसे चौड़ी, लंबी और चमकीली तिलक की लकीर से मेरी शक्ति बड़े अच्छे से सुषुम्ना में घूम रही थी, और मैं बड़ा सुकून महसूस कर रहा था। मैं बारबार उस तिलक को देखकर लाभ उठा रहा था। बेशक वह इतना बड़ा तिलक ऑड जैसा और हास्यास्पद सा लग रहा था। उसकी आँखों और चालढाल में भी व्यावहारिक अध्यात्म व अद्वैत नजर आ रहा था। दूसरे तिलकों से भी शक्ति मिल रही थी, पर उतनी नहीं। उनके चेहरों पर अध्यात्म का तेज भी उतना ज्यादा नहीं

था। असली जीवन में तो तिलक लगाने वाले को भी अप्रत्यक्ष रूप से कुंडलिनी लाभ मिलता है, जब दूसरे लोग उसके तिलक की तरफ देखते हैं। इसका मतलब है कि सत्संग की शक्ति दूरदर्शन के माध्यम से भी मिल सकती है। गजब का आध्यात्मिक विज्ञान है यारो।

कुण्डलिनी ध्यान योग में विपासना अर्थात साक्षीभाव साधना का अत्यधिक महत्त्व है

विपासना साधना के लिए अति उपयोगी प्राणायाम कपालभाति

पिछली से पिछली पोस्ट में ही मैं विपासना के बारे में भी बता रहा था। मेरे अनुभव के अनुसार कपालभाति प्राणायाम भी विपासना में बहुत मदद करता है। सिर्फ सांस को बाहर ही धकेलना है। अंदर जैसी जाती हो, जाने दो। अपने को थकान न होने दो। तनावरहित बने रहो। जो रंगबिरंगे विचार उमड़ रहे हों, उन्हें उमड़ने दो। जो पुरानी यादें आ रही हों, उन्हें आने दो। वे खुद शून्य आत्मा में विलीन होती जाएंगी। दरअसल ऐसा इसलिए होता है, क्योंकि मस्तिष्क में बिना किसी भौतिक वस्तुओं की सहायता के उनके प्रकट होने से आदमी को यह पता चल जाता है कि वे असत्य व आकाश की तरह सूक्ष्म हैं, पर भौतिक संसार के सम्पर्क में आने से भ्रम से सत्य व स्थूल जान पड़ते हैं। विपासना का सिद्धांत भी यही है। इसीलिए शास्त्रों में बारबार यही कहा गया है कि संसार असत्य है। सम्भवतः यह विपासना के लिए लिखा गया है, क्योंकि जब विपासना से संसार असत्य जान पड़ता है, तब संसार को असत्य जान लेने से विपासना खुद ही हो जाएगी। कपालभाति प्राणायाम से इसलिए विपश्यना ज्यादा होती है, क्योंकि व्यस्त दैनिक व्यवहार में भी हम ऐसे ही तेजी से और झटकों से सांस लेते हैं। जैसे ही कोई विचार आता है, ऐसा लगता है कि सांस के लिए भूख बढ़ गई, और अंदर जाने वाली सांस भी गहरी, मीठी, स्वाद व तृप्त करने वाली लगती है। अगर विचार को बलपूर्वक न दबाओ, तो इससे आगे से आगे जुड़ने से विचारों की श्रृंखला बन जाती है, और लगभग सारा ही मन घड़े से बाहर आ जाता है, जिसे पिछली पोस्ट की कथा में कहा गया है कि एक घड़े से सैंकड़ो या हजारों पुत्रों ने जन्म लिया। जो विचार-चित्र पहले से ही हल्का जमा हो, वह कम उभरता है। मतलब साफ है कि आसक्ति भरे व्यवहार से ही मन में कचरा जमा होता है। उसको विपासना से बारबार बाहर निकालना मतलब कचरा साफ करना। जैसे कढ़ाई

में पक्के जमे मैल को बारबार धोकर बाहर निकलना पड़ता है, वैसे ही आसक्ति वाले विचार को बारबार निकालना पड़ता है।

आदमी को घूमककड़ की तरह रहना चाहिए, क्योंकि विपश्यना साधना नए-नए स्थानों व व्यक्तियों के सम्पर्क में आने से मजबूत होती है

पिछली पोस्ट में कहे रंगारंग कार्यक्रम को देखते हुए मेरे मन में नए-पुराने विचार साक्षीभाव व आनंद के साथ उमड़ रहे थे, और आत्मा में विलीन हो रहे थे। मतलब विपश्यना साधना खुद ही हो रही थी। दरअसल वह क्षेत्र मेरे लिए खुद ही विपश्यना क्षेत्र बना था। ऐसा होता है जब किसी स्थान के साथ एक पुराना व अज्ञात सा संबंध जुड़ता है, जो अपने गृहक्षेत्र से मिलता जुलता तो है, पर वहाँ के लोग नए आदमी को अजनबी व बाहरी सा समझ कर उसके प्रति तटस्थ से रहते हैं। विरोध तो नहीं कर पाते क्योंकि उन्हें भी नए व्यक्ति से अपनापन सा लगता है। इससे आदमी की शक्ति खुद ही दुappearing व रिश्तों के फालतू झमेलों से बची रहकर विपश्यना में खर्च होती रहती है। हमारे गाँव के जो देवता हैं, वे हमारे पुराने राजा हुआ करते थे। वे एकप्रकार से हमारे पूर्वज भी थे। उनके साथ हमारे पूर्वज पुरानी रियासत से नई रियासत को आए थे। नई रियासत में उन्होंने अपना घर उस जगह पर बनवाया, जहाँ से उन्हें अपनी पुरानी रियासत वाली पहाड़ी सीधे और हर समय नजर आती थी। अपने घर के ज्यादातर द्वार और खिड़कियां भी उन्होंने उसी पहाड़ी की दिशा में बनवाए थे। उनकी मृत्यु के बाद जब वहाँ उनका मंदिर बनवाया गया, तब भी उसका द्वार उसी दिशा में रखा गया। इसी तरह मेरी दादी माँ बताया करती थीं कि एक वैरागी साधु बाबा उनके गाँव में रहते थे, जो उन्हें बेटी की तरह प्यार देते थे। दादी का गाँव एक ऊँचे पहाड़ के शिखर के पास ही था। वह पहाड़ बहुत ऊँचा था, और आसपास के पहाड़ उसके सामने कहीं नहीं ठहरते थे। उस पहाड़ के शिखर पर आने का उनका मुख्य मकसद था, नीचाई पर बसे उनके अपने पुराने गांव का लगातार

नजर में बने रहना, ताकि अच्छे से साधना हो पाती, और पुराने घर की याद विपासना के साथ बनी रहती अर्थात वह याद उनकी साधना में विघ्न न डालकर लाभ ही पहुंचाती। वास्तव में, दुर्भाग्य से, धीरे-धीरे उनके परिवार के सभी सदस्य विभिन्न आपदाओं से कालकवलित हो गए थे। इस वजह से ढेर सारी दौलत भी मौत की भेंट चढ़ गई थी। इससे वे संसार के मोह से बिल्कुल विरक्त हो गए थे। व्यक्तिगत संबंध के मामले में भी यही आध्यात्मिक मनोविज्ञान काम करता है। किसी व्यक्ति के प्रति आकर्षण हो पर यदि वह बाहरी व विदेशी समझ कर प्यार करने वाले को ठुकरा दे तो विपश्यना खुद ही होती रहती है। मुझे बताते हुए कोई संकोच नहीं कि इस दूसरे किस्म की व्यक्तिगत संबंध की विपशयन से मेरी नींद में जागृति में बहुत बड़ा हाथ था।

हिंदु शास्त्रीय कथाएं एकसाथ दो अर्थ लिए होती हैं, भौतिक रूप में प्रकृति संरक्षक व आध्यात्मिक रूप में मनोवैज्ञानिक

हम इस पर भी बात रहे रहे थे कि इन कथाओं को पढ़ने का पूरा मजा तब आता है जब इनके पहेली जैसे रूप के साथ असली मनोवैज्ञानिक अर्थ भी समझ में आता है। कोई यह कह सकता है कि इन कथाओं से अंधविश्वास बढ़ता है। पर इनको मानने वालों ने इनके असली या भौतिक रूप पर ज्यादा अमल नहीं किया, इन पर अटूट श्रद्धा करके इनकी दिव्यता और पारलौकिकता को बनाए रखा। इनको पवित्र व पारलौकिक कथाओं की तरह समझा, लौकिक और भौतिक नहीं। वैसे ये कथाएं ज्यादा अमानवीय भी नहीं हैं। गंगा नदी को पूजने को ही कहा है, उसे गंदा करने को तो नहीं। इससे प्रकृति के प्रति प्रेम जागता है। वैसे भी नाड़ी विशेषकर सुषुम्ना नाड़ी नदी की तरह बहती है। नदी के ध्यान से संभव है कि नाड़ी की तरफ खुद ही ध्यान चला जाए। मतलब जो भी कथाएं हैं, दोनों प्रकार से फायदा ही करती हैं, भौतिक रूप से प्रकृति का संरक्षण करती हैं, और आध्यात्मिक रूपक के रूप में आध्यात्मिक उत्थान करती हैं। कुछ गिनेचुने मामले में मानवता के अहित

में प्रतीत भी हो सकती हैं, जैसे कि मनु स्मृति के कुछ वाक्यों पर आरोप लगाया जाता है। पर आरोप के जवाब में ज्यादातर उनका आध्यात्मिक या पारलौकिक अर्थ ही लगाया जाता है, भौतिक नहीं। हमने तो अपने जीवन में उनके अनुसार चलते हुए कोई देखा नहीं, सिर्फ उन पर आरोप ही लगते देखे हैं। बहुत सम्भव है कि वे वाक्य मूल ग्रंथ में नहीं थे और बाद में उनको साजिश के तहत जोड़ दिया गया हो। इसके विपरीत कुछ अन्य धर्मों में मुझे अधिकांश लोग वैसी रहस्यात्मक कथाओं पर हूबहू चलते दिखाई देते हैं, उनके विकृत जैसे भौतिक रूप में। यहाँ तक कि वे उन कथाओं के आध्यात्मिक विश्लेषण व रहस्योद्घाटन की इजाजत भी नहीं देते, और जबरदस्ती ऐसा करने वालों को जरा भी नहीं बख्शते। जेहाद, काफीरों की अकारण हत्या, जबरन धर्मान्तरण जैसे उदाहरण आज सबके सामने हैं। हमने एक पोस्ट लिखी थी, जिसमें होली स्पिरिट व कुंडलिनी के बीच में समानता को प्रदर्शित किया गया था। दो-चार लोग किसी भी वैज्ञानिक तर्क को नकारते हुए उस पोस्ट को नकारने लगे। एक जेंटलमेन तो उसे शैतान व डेमन या शत्रु की कारगुजारी बताने लगे। वे इस बात को नहीं समझ रहे थे कि वह विभिन्न धर्मों के बीच मैत्री व समानता पैदा करने का प्रयास था। वे इस वैबसाईट में दर्शाए तंत्र को ओकल्ट या भूतिया प्रेक्टिस समझ रहे थे। हमें किसी भी विषय में पूर्वाग्रह न रखकर ओपन माइंडड होना चाहिए। हिंदु दर्शन में अन्य की अपेक्षा विज्ञानवादी सोच व तर्कशीलता को ज्यादा महत्त्व दिया गया है, और जबरदस्ती अंधविश्वास को बनाए रखने को कम, जहाँ तक मैं समझता हूँ। वैसे कुछ न कुछ कमियाँ तो हर जगह ही पाई जाती हैं। साथ में वे महोदय मुझे कहते हैं कि मैं किसी धर्म वगैरह से अपनी पहचान बना कर रखता हूँ। मैं जब हिंदु हूँ तो अपने हिंदु धर्म से पहचान बना कर क्यों नहीं रखूंगा। सभी धर्मों में अपनी विशिष्टताएं हैं। विभिन्न धर्मों से दुनिया विविध रंगों से भरी व सुंदर लगती है, हालांकि उनमें अवश्यँभावी रूप से अनुस्यूत मानव धर्म सबके लिए एकसमान ही है। पर फिर भी मैं अपने स्वतंत्र विचार रखता हूँ, और जो मुझे गलत या अंधविश्वास लगता है, उसे मैं नहीं भी मानता। मेरी लगभग हरेक पोस्ट में किसी न किसी हिंदु मान्यता का

वैज्ञानिक व मानवीय स्पष्टीकरण होता है। मेरे धर्म की उदार और सर्वधर्मसमभाव वाली सोच का भला इससे बड़ा सीधा प्रमाण क्या होगा। एकबार हिंदी भाषा पढ़ाने वाले एक विद्वान व दार्शनिक अध्यापक से व्हट्सएप्प पर मेरी मुलाक़ात हुई थी। मैंने उन्हें बताया कि कैसे पाश्चात्य लोग योग में यहाँ के स्थानीय हिंदु लोगों से ज्यादा रुचि ले रहे हैं। तो उन्होंने लिखा कि उनमें संस्कार नहीं होते। संस्कार मतलब पीढ़ियों से चली आ रही सांस्कृतिक परम्परा। अब मुझे उनकी वह बात समझ आ रही है कि कैसे संस्कारों की कमी से आदमी एकदम से उस परम्परा के खिलाफ जा सकता है, जिसको वह जीजान से मान रहा हो। संस्कार आदमी को परम्परा से जोड़ कर रखते हैं।

कुण्डलिनी योग ही भगवान विष्णु के वराह अवतार के रूपक के रूप में वर्णित किया गया है

दोस्तों, मैं पिछली पोस्ट में नाक व इड़ापिंगला से जुड़े कुछ आध्यात्मिक रहस्य साझा कर रहा था। इसी से जुड़ी एक पौराणिक कथा का स्मरण हो आया तो सोचा कि इस पोस्ट में उसका योग आधारित रहस्योद्घाटन करने की कोशिश करते हैं। कहते हैं कि पुराने युग में राक्षस हिरण्याक्ष धरती को चुरा के ले गया था और उसे समुद्र के अंदर गहराई में छिपा दिया था। इससे सभी देवता परेशान होकर ब्रह्मा को साथ लेकर भगवान विष्णु के पास गए और उनसे सहायता का वचन प्राप्त किया। तभी ब्रह्मा की नाक से एक छोटा सा सूअर निकला। दरअसल भगवान विष्णु ने ही उस वराह का रूप धारण किया हुआ था। वह देखते ही देखते बड़ा होकर समुद्र में घुस गया। वहाँ उसने गहराई में छुपे दैत्य हिरण्याक्ष को देख लिया और उससे युद्ध करने लगा। देखते ही देखते उसने हिरण्याक्ष को मार दिया और वेदों समेत धरती को अपने मुंह के दोनों किनारों वाली लंबी और पैनी दो दाढ़ें आगे करके उन पर गोल धरती को बराबर संतुलित करके टिका दिया। फिर वे समुद्र के ऊपर आए और उन्होंने धरती को यथास्थान स्थापित कर दिया। फिर भी वराह भगवान शांत नहीं हो रहे थे। उनको भगवान शिव ने एक अवतार लेकर शांत किया।

वराह अवतार कथा का योग आधारित रहस्यात्मक विश्लेषण

नासिका पर और विशेषकर नासिका से अंदरबाहर आतीजाती साँस पर ध्यान देने से शक्ति केंद्रीय रेखा में सुषुम्ना नाड़ी की सीध में आ जाती है। कहते हैं कि नासिका से बाहर जाती साँस से होकर ही वराह बाहर निकला। बाहर जाती साँस पर ध्यान देने से शक्ति आगे वाले चैनल से नीचे उतरती है, और

सभी चक्रों को भेदते हुए मूलाधार में पहुंच जाती है। यही वराह का समुद्र के नीचे पाताल लोक में पहुंचना है। अगर उसे पाताल लोक की बजाय समुद्र ही मानें तो भी संसार सागर का सबसे निचला पायदान मूलाधार ही है, क्योंकि विभिन्न चक्रों में ही सारा संसार बसा हुआ है। सम्भवतः इसलिए भी समुद्र कहा गया हो क्योंकि वीर्यरूपी जल के भंडार मूलाधार क्षेत्र के अंतर्गत ही आते हैं, जिसमें सारा संसार के रूप में दबा सा पड़ा होता है। हिरण्याक्ष का मतलब द्वैतभाव रूपी अज्ञान। हिरण्य मतलब सोना, अक्ष मतलब आंख। जिसकी नजर में सुवर्ण अर्थात समृद्धि के प्रति आदरभाव है, और उसके पीछे द्वैत भाव से अंधा सा होकर पड़ा हुआ है, वही हिरण्याक्ष है। उससे कुण्डलिनी शक्ति मूलाधार के अँधेरे में छुप अर्थात सो जाती है। मतलब जो मन के विचारों की शक्ति है, वह अवचेतन विचारों के रूप में अव्यक्त होकर मूलाधार में दब जैसी जाती है। यही तो कुंडलिनी है। उस मानसिक संसार के साथ वेद भी मूलाधार में दब जाते हैं, क्योंकि शुद्ध व सत्त्वगुणी आचार-विचार ही तो वेदों के रूप में हैं। शक्ति मूलाधार पर पहुँचने के बाद पीठ से होते हुए वापिस ऊपर मुड़ने लगती है। शक्ति इड़ा और पिंगला, ज्यादातर इड़ा नाड़ी से ऊपर चढ़ने की कोशिश करती है, क्योंकि इसमें अवरोध कम होता है। कई बार शक्ति इड़ा और पिंगला में कुछ क्षणों के लिए प्रत्येक में बारीबारी से झूलने लगती है। ऐसे में आज्ञा चक्र पर भी ध्यान बनाकर रखने से शक्ति बीचबीच में कुछ क्षणों के लिए सुषुम्ना में भी ठहरती रहती है। इड़ा और पिंगला ही वराह के मुंह के दोनों किनारों वाले दो नुकीले दाँत हैं। सुषुम्ना नाड़ी या आज्ञा चक्र ही उन दोनों दांतों के ऊपर संतुलित करके रखी हुई गोल पृथ्वी है। चक्र भी गोल ही होता है। सुषुम्ना को पृथ्वी इसलिए कहा गया है क्योंकि दुनिया के सारे अनुभव मस्तिष्क में ही होते हैं, बाहर कहीं नहीं, और सुषुम्ना नाड़ी से होकर ही मस्तिष्क को शक्ति संप्रेषित होती है। वराह कुण्डलिनी-पुरुष अर्थात ध्यान-छवि है। यह भगवान विष्णु का ध्यान ही है। उसको भी विष्णु की तरह ही शंख, चक्र, गदा, पद्म के साथ चतुर्भुज रूप में दिखाया गया है।इसीलिए कहा है कि भगवान विष्णु ने वराह रूप में अवतार लिया। रूपक के लिए वराह को इसलिए भी चुना गया है क्योंकि सूअर ही

जमीन को खोदकर गहराई में भोजन के रूप में छिपी अपनी शक्ति की तलाश करता रहता है। सूअर को पृथ्वी इसीलिए प्यारी होती है। इसीलिए उसे लाने वह समुद्र में भी घुस जाता है। मूलाधार में सोई हुई या दबी हुई धरती अर्थात मन रूपी शक्ति को पाने के लिए वह इड़ा और पिंगला रूपी दांतों के साथ उस शक्ति को वहाँ पर टटोलता और खोदता है। फिर उसको सुषुम्ना रूपी संतुलन देकर जल के बाहर ले आता है, और उसे अपने पूर्ववत असली स्थान पर स्थापित कर देता है। जल से बाहर ले आता है माने नाड़ी के शिखर पर उससे बाहर सहस्रार में पहुंचा देता है, क्योंकि नाड़ी भी जल की तरह ही बहती है। उसका असली स्थान मस्तिष्क का सहस्रार ही है, क्योंकि वही सभी अनुभवों का केंद्र है। सुषुम्ना नाड़ी भी सीधी मूलाधार से सहस्रार को जाती है। इससे अवचेतन मन में दबे हुए विचार फिर से अनुभव में आने लगते हैं, और आनंदमयी शून्य-आत्मा में विलीन होने लगते हैं। मतलब अवचेतन विचारों के रूप में सोई हुई शक्ति जागने लगती है। यह विपासना ही तो है। विपासना मस्तिष्क के किसी भी हिस्से में हो सकती है, सहस्रार को छोड़कर, क्योंकि इसके लिए कम शक्ति चाहिए होती है। होती सहस्रार में ही है, पर कम ऊर्जा के कारण बाहर जान पड़ती है। जिस विचार में जितनी कम शक्ति होती है, वह सहस्रार से उतना ही दूर प्रतीत होता है। वैसे भी आत्मा का स्थान सहस्रार में ही बताया गया है। सहस्रार में केवल कुण्डलिनी चित्र का ही ध्यान किया जाता है, जोकि किसी मूर्ति या गुरु या पारलौकिक देह आदि के रूप में होता है। यह चित्र लगभग असली भौतिक रूप की तरह महसूस होता है अभ्यास से, इसीलिए इसके लिए विपासना की अपेक्षा काफी ज्यादा शक्ति लगती है। यदि कोई किसी आम लौकिक आदमी या औरत के रूप की छवि को सहस्रार में जागृत करने लगे, तब तो वह रात को ही नींद में चलता हुआ उसके पास पहुंच जाएगा। तब ध्यान कैसे होगा। फिर सभी देवता और ऋषिगण प्रसन्न होकर वराह भगवान की हाथ जोड़कर स्तुति करते हैं। वैसे भी इन सभी का उद्देष्य जीवमात्र को जन्ममरण रूपी दुःख से दूर करना ही है, जो सहस्रार चक्र में ही संभव है, इसीलिए खुश होते हैं। शिवजी के द्वारा वराह को शांत करने या मारने का मतलब है कि योगी

कुण्डलिनी का भी मोह छोड़कर शिव के जैसा अद्वैतवान तांत्रिक बन गया। वैसे भी सिद्धांत यही है कि ज्ञान अर्थात कुण्डलिनी जागरण होने के बाद या वैसे भी अद्वैतमय तंत्र ही सर्वोच्च समझ अर्थात सुप्रीम अंडरस्टेंडिंग है, जिसे ओशो महाराज भी अपनी एक पुस्तक 'tantra- a supreme understanding' के रूप में दुनिया के सामने स्पष्ट करते हैं।

कुण्डलिनी योग विज्ञान ही क्वांटम यांत्रिकी, अंतरिक्ष विज्ञान, खगोल-भौतिकी और ब्रह्माण्ड विज्ञान का शिखरबिंदु है

कुण्डलिनी जागरण ही सिद्ध करता है कि अभावात्मक शून्य का अस्तित्व ही नहीं है

दोस्तों, मैं हाल ही में अपने जागृति के अनुभवों को विज्ञानवादियों को प्रेषित करने बारे विचार कर रहा था, ताकि ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के रहस्य को सुलझाया जा सके, जिस पर वे बुरी तरह से अटके हुए हैं। पर मुझे उनकी साइटों पर न तो कमेंट बॉक्स मिला और न ही उनकी तरफ से इस तरह की कोई अपील ही गूगल पर मिली। एक-दो का एड्रेस मिलने पर उनसे जीमेल पर कंटेक्ट किया भी पर कोई जवाब नहीं मिला। आपको ऐसा कोई मंच पता हो तो कृपया जरूर शेयर करना।

अध्यात्म विज्ञान और अंतरिक्ष विज्ञान आपस में जुड़े हुए हैं, और एकदूसरे के बिना अधूरे हैं। इसीलिए ***सनातन वैदिक दर्शन*** के साथ ***ज्योतिष*** विज्ञान भी सम्मिलित किया गया था, और इसे एक विशिष्ट सम्मानजनक स्थान प्राप्त था।

शून्यवाद ही सभी समस्याओं की जड़ है

शून्यवाद सबसे बड़ा द्वैतकारी अज्ञान है। विज्ञान अगर शून्यवाद का सहारा न लेता तो आज प्रकृति और **मानवता** का विनाश न हो रहा होता। इससे आज चारों तरफ **युद्ध**, प्राकृतिक आपदा आदि के रूप में हायतौबा न मच रही होती। फिर विज्ञान और अद्वैतरूपी अध्यात्म एकसाथ आगे बढ़ रहे होते और मानवमात्र का सम्पूर्ण व सर्वांगीण विकास सुनिश्चित हो रहा

होता। **प्राचीन भारत** से बुद्ध धर्म इसी वजह से लगभग बाहर कर दिया गया था, क्योंकि उसने शून्यवाद का सहारा लिया। हालांकि बुद्धिस्ट बहुत तर्क देते हैं कि उनका उपास्य शून्य नहीं पर चेतन ब्रह्म है, यह सत्य भी है, पर बौद्ध धर्म के बाहरी आचारविचार से तो वह शून्य ही प्रतीत होता है। आम जनमानस तो ऊपर से ही देखते हैं, गहरी बात नहीं समझ पाते।
लगता है कि दुनिया की सबसे अधिक शून्य-विरोधी संस्कृति **हिंदु सनातन संस्कृति** ही है। इसमें मिट्टी-पत्थर आदि जड़ वस्तुओं के साथसाथ अंधेरा काला आसमान भी **पूजा** जाता है। उदाहरण के लिए **शनि देव** और **काली माता**।

जागृति के अनुभव के आधार पर ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति और उसकी आधारभूत संरचना

जिसे हम शून्य या अंधकारनुमा या आनंदहीन **आकाश** समझते हैं, और अपनी आत्मा के रूप में महसूस भी करते हैं, वह जागृति के समय वैसा महसूस नहीं होता, अर्थात वह अशून्य या प्रकाश या **आनंदमय** जैसा आकाश महसूस होता है। अशून्य इसलिए कह रहा हूँ, क्योंकि वह भरे-पूरे भौतिक संसार के जैसा ही लगता है। प्रत्यक्ष भौतिक संसार व उससे बने मानसिक चित्र या विचार उसमें तरंगों की तरह महसूस होते हैं। वैसे ही जैसे **सागर में तरंगें** होती हैं। विभिन्न **धर्मशास्त्रों** में भी ऐसा ही वर्णन किया गया है। तो क्या विज्ञान इस बात को अनदेखा कर रहा है।

अपने मूल रूप में अंतरिक्ष ही आत्मा है

सारा संसार आभासी व अवास्तविक है

मूल मत ओरिजिनल माने वास्तविक अर्थात **निर्विकार** रूप में। **आइंस्टिन के गुरुत्वाकर्षण के सिद्धांत** से यह काफी पहले ही जाहिर हो गया था, पर इस आध्यात्मिक रूप में किसी ने समझा नहीं था। आइंस्टिन बहुत महान व्यक्ति

थे पर ऐसा लगता है कि उनका सामना किसी असली जागृत व्यक्ति से नहीं हुआ था। हाहा। आइंस्टिन ने सिद्ध किया कि **स्पेसटाईम** किसी त्रिआयामी चादर की तरह मुड़ सकता है, उसमें गड्ढे पड़ सकते हैं। वैसे जो पहले ही खाली गड्ढे की तरह है, उसमें एक और खाली गड्ढा कैसे बन सकता है। मतलब साफ है कि अंतरिक्ष वैसा शून्य नहीं है, जैसा आम आदमी समझते हैं। वह एकसाथ शून्य भी है और नहीं भी, वह **भावरूप शून्य** है, वह आत्मा है, वह परमात्मा है। यह ऐसे ही है, जैसे तलाब के पानी में किश्ती से गड्ढा बनता है। तरंग भी तो इसी तरह गड्ढा बनाते हुए चलती है। मतलब अंतरिक्ष में तरंग बन सकती है। फिर वह शून्य कैसे हुआ। कई लोग यह भी कह सकते हैं कि वह ऐसा शून्य है, जिसमें झूठमूठ वाली माने वर्चुअल तरंग बन सकती है। ऋषिमुनि भी आत्मा का ऐसा ही अनुभव बताते हैं। मतलब वह ऐसी तरंग नहीं होती जो आत्मा को असल में विकृत कर सके। यहाँ तक कि पानी भी तरंग से थोड़ी देर के लिए ही विकृत लगता है, तरंग गुजर जाने के बाद उसकी सतह भी बिल्कुल सीधी और पहले जैसी हो जाती है। हवा के साथ भी ऐसा ही होता है। फिर अंतरिक्ष या आकाश तो उनसे भी सूक्ष्म है, वह कैसे **विकृत** हो सकता है। वह तो थोड़ी देर के लिए भी विकृत नहीं हो सकता, क्योंकि विकृत होकर जाएगा कहाँ। क्योंकि हर जगह आकाश है। पानी और हवा तो खाली स्थान को खिसक जाते हैं, पर अंतरिक्ष कहाँ को खिसकेगा। इसका मतलब है कि अंतरिक्ष की तरंग पानी और हवा की तरंग से भी ज्यादा आभासी है। मतलब तरंग कहीं नहीं चलती, सिर्फ प्रतीत होती है। है न आश्चर्यजनक तथ्य। गजब का शून्य है भाई। सम्भवतः यही परमात्मा की वह जादूगरी या माया है जो न होते हुए भी सबकुछ दिखा देती है।

शास्त्रीय प्रमाण के रूप में, **महाभारत** जितने आकार वाले प्रसिद्ध **योगवासिष्ठ** उपनामित **महारामायण** ग्रंथ में बारम्बार और हर जगह **भावपूर्ण शून्य आकाश या अंतरिक्ष** को ही परमात्मा कहा गया है। उसमें हर जगह संसार को **असत्य** व आभासी कहा गया है।

शून्य में अगर सारी दुनिया विद्यमान है तो वह शून्य दुनिया के जैसे गुणों वाला होना चाहिए

अब हम उपरोक्त वैज्ञानिक विश्लेषण को थोड़ा तर्क की धार देते हैं। अंतरिक्ष रूपी शून्य में वह सभी क्रियाकलाप होते हैं, जो भौतिक संसार में होते हैं, जैसा कि हमने ऊपर कहा। इसका मतलब है कि शून्य का स्वभाव दुनिया के जैसा होना चाहिए। यह तभी संभव है अगर उस शून्य में **सत्त्व गुण, रजो गुण और तमोगुण,** प्रकृति के ये तीनों गुण एकसाथ विद्यमान हों, क्योंकि भौतिक संसार इन्हीं तीनों गुणों से बना है, जैसा कि शास्त्रों में कहा गया है। इसीलिए उस शून्य आत्मा को **त्रिगुणातीत** मतलब तीनों गुणों से परे कहा गया है, क्योंकि तीनों गुण एकसमान मात्रा में होने से एकदूसरे के प्रभाव को कैंसल कर देते हैं, हालांकि रहते तीनों गुण हैं। इसीलिए अध्यात्म शास्त्रों में परमात्मा को **अनिर्वचनीय** भी कहते हैं, मतलब उसमें तीनों गुण हैं भी, नहीं भी हैं, ये दोनों बातें भी हैं और दोनों भी नहीं हैं। शून्य में ये गुण एक दूसरे से कम ज्यादा नहीं हो सकते, क्योंकि समय के साथ भौतिक वस्तु के परिवर्तन से गुण कम या ज्यादा होते रहते हैं। पर शून्य परिवर्तित नहीं हो सकता। इसका मतलब है कि शून्य आत्मा एक ही समय में सत्त्व रूपी प्रकाश, रज रूपी क्रियाशीलता (आभासी तरंग के रूप में, यद्यपि यह नहीं भी है) और तम रूपी अंधकार एकसाथ विद्यमान हैं। यह सब शास्त्रों के इस कथन को सिद्ध करता है कि वास्तविक व सर्वव्यापी अंतरिक्ष जो **परम-आत्मा** है, वह सभी सांसारिक जीवों की तुलना में कहीं बेहतर तरीके से **चेतन** है, और वह प्राप्त किया जा सकता है।

शून्य अंतरिक्ष भी भौतिक पदार्थों की तरह व्यवहार करता है

हालांकि सिर्फ यह अंतर है कि जिसे शून्य अंतरिक्ष आभासिक या **वर्चुअल** रूप में करता है, उसे भौतिक पदार्थ सत्य रूप में करता है। इसलिए शास्त्रों में कहा है कि परमात्मा सबसे बड़ा **नटखट**, नाटककार और जादूगर है। उदाहरण

के लिए समुद्र के पानी से पानी छोटे-छोटे टुकड़ों में बाहर उछलकर वास्तविक बुँदे बनाता है। पर शून्य अंतरिक्ष रूपी सागर में पहली बात, शून्य टुकड़ा बन कर नहीं उछल सकता, दूसरा ऐसी किसी खाली जगह का अस्तित्व ही नहीं है, जो शून्य आकाश के रूप में न हो। इसलिए एक ही रास्ता बचता है कि झूठमूठ की अर्थात दिखावे की अर्थात वर्चुअल बुँदे बनाई जाए। उन्हें ही विज्ञान के अनुसार हम **मूल कण** अर्थात **एलिमेंट्री पार्टिकल्स** कहते हैं, जो लगातार शून्य अंतरिक्ष में पॉप होते रहते हैं अर्थात प्रकट होते रहते हैं और उसीमें विलीन भी होते रहते हैं। बिल्कुल वैसे ही जैसे समुद्र से जल की बुँदे बाहर निकलती रहती हैं, और उसीमें विलीन होती रहती हैं। फिर आत्मजागृति का यह अनुभव विज्ञानसम्मत व सही क्यों न मान लिया जाए कि सारी सृष्टि आत्मा के अंदर आभासी तरंग है। दिक्क़त यही है कि उस अनुभव को किसी और को नहीं दिखाया जा सकता और कोई मशीन भी उसे वेरिफाई नहीं कर सकती। इसे खुद अनुभव करना पड़ता है।

विज्ञान-युग का योग-युग में रूपान्तरण

धर्मग्रंथों में यह प्रचुरता से लिखा गया है कि शून्य से जगत की उत्पत्ति नहीं हो सकती। बहुत पहले से ऋषियों को **आत्मानुभव** से ज्ञात था कि **स्वयंप्रकाश** आकाशरूप आत्मा से ही इस जगत की उत्पत्ति हुई है, किसी अँधेरेनुमा शून्य अंतरिक्ष से नहीं। इसके लिए बहुत से विज्ञाननुमा तर्क दिए जाते थे, जिससे भी यही सिद्ध होता था। **आत्मजागृत** अर्थात **कुण्डलिनी-जागृत** व्यक्ति भी ऐसा ही अनुभव बताते हैं। वह आत्मा भौतिक इन्द्रियों की पकड़ में नहीं आ सकता, केवल अपने स्वयं के असली स्वरूप के रूप में अनुभव होता है। इसलिए एक बात तो साफ है कि विज्ञान से बेशक उसका अंदाजा लग जाए, पर दिखेगा वह केवल योग से ही। विज्ञान उसका अंदाजा लगाकर शांत हो जाएगा, और फिर उसको अनुभव करने के लिए योग की तरफ बढ़ेगा। सारे वैज्ञानिक योगी बन जाएंगे, और विज्ञान-युग योग-युग में रूपान्तरित हो जाएगा।

बाहर के और भीतर के ब्रह्माण्ड में कोई अंतर नहीं है

अगर मन का ब्रह्माण्ड आत्मा के अंदर अनुभव होता है, तो बाहर का भौतिक ब्रह्माण्ड भी, क्योंकि उसे हम मानसिक ब्रह्माण्ड से ही अंदाजन जान सकते हैं, सीधे व असली रूप में कभी नहीं। पर इतना तय है कि बाहरी ब्रह्माण्ड का असली रूप भी मनोरूप ब्रह्माण्ड की तरह ही है। बस इतना सा अंतर है कि बाहरी ब्रह्माण्ड को भीतरी ब्रह्माण्ड से ज्यादा स्थिरता मिली हुई है, इसीलिए हजारों सालों तक सभी को वह लगभग एक जैसा ही दिखता है, पर मानसिक ब्रह्माण्ड विचारों और अनुभवों के साथ प्रतिपल बदलता रहता है।

विज्ञान के कई गहन रहस्य कुण्डलिनी जागरण से सुलझ सकते हैं

उदाहरण के लिए ब्रह्माण्ड के सबसे गहरे मूल में क्या है, ***क्वांटम एन्टेन्गलमेंट*** का सिद्धांत क्या है, विद्युत्चुंबकीय तरंग क्या है व कैसे चलती है, ***वेक्यूम एनर्जी,*** क्वांटम फलकचुएशन, ***डार्क एनर्जी,*** महाविस्फोट, ब्रह्माण्ड का विस्तार, ब्लैक होल, ***मल्टीवर्स***, ***पैरालेल यूनिवर्स***, एंटी यूनिवर्स, फोर्थ डाईमेंशन, ***स्पेसटाईम ट्रेवल,*** टेलीपोर्टेशन, एलियन हंटिंग आदि, और अन्य भी बहुत कुछ। कालेब शार्फ, एक अंतरिक्ष विज्ञानी कहते हैं कि पूरा ब्रह्माण्ड ही एक देत्याकार **एलियन** हो सकता है। ***आइंस्टिन*** की नजर में समय एक भ्रम है। ऐसी सभी सोचें और थ्योरियाँ ज्ञानी ऋषियों और दार्शनिकों के चिंतन से मेल खाती हैं। इसलिए विज्ञानवादियों को एकांगी भौतिक सोच छोड़कर योग और अध्यात्म को भी अपने अध्ययन में सम्मिलित करना चाहिए, तभी दुनिया के सारे रहस्यों से पर्दा उठ सकता है। कई क्वांटम थ्योरियाँ योग विज्ञान से समझ में आ सकती हैं, जैसे कि **वेव पार्टिकल ड्यूल नेचर ऑफ़ मैटर**, **स्टैंडिंग वेव**, डबल स्लिट एकस्पेरीमेंट, डी ब्रॉगली सिद्धांत, ***केसीमिर इफेक्ट***, आदि बहुत सी। जिस ***थ्योरी ऑफ़ एव्रीथिंग*** के लिए वैज्ञानिक लम्बे समय से प्रयास कर रहे हैं, वह लगता है कि योग विज्ञान से मिल सकती है। कुछ वैज्ञानिक सत्य

की तरफ बढ़ भी रहे हैं, जैसे कि **स्टीफेन हॉकिंग** की **स्ट्रिंग थ्योरी**, ***रोबर्ट लैंजा*** की ***बायोसेंटरिज्म थ्योरी***, हरेक वस्तु के रूप में एलियन के छुपे होने की थ्योरी, एडम फ्रैंक की धरती को एक जीवित प्राणी समझने वाली थ्योरी, धरती को अपराधियों के लिए जेल और चन्द्रमा को जेल निगरानी केंद्र मानने वाली थ्योरी आदि,और अन्य भी कई सारी। हालांकि यह सब वैज्ञानिक अंदाजे ही हैं, जैसे मैंने ऊपर कहा। इनको सिद्ध करने के लिए उन लोगों को साथ में लेने की जरूरत है, जिन्होंने योग से कुण्डलिनी जागरण को प्रत्यक्ष रूप में अनुभव किया है। आजकल ऐसी अबूझ किस्म की विज्ञान पहेलियों पर हर जगह चर्चा का माहौल गरमाया हुआ है। लोहा गर्म है, और वैज्ञानिकों को हथोड़ा चलाने में संकोच नहीं करना चाहिए। अगर आप भी इन पहेलियों को सुलझाने में योगदान देना चाहते हैं, तो कमेंट बॉक्स में जरूर लिखें।

कुण्डलिनी योगी एक सच्चे क्वांटम वैज्ञानिक जैसा होता है, जो सूक्ष्म भौतिक दुनिया का मास्टर होता है

कुण्डलिनी योग ही आदमी की सीखने की और आगे बढ़ने की जिज्ञासा को पूरा कर सकता है

दोस्तों मैं पिछली पोस्ट में **आत्मा की अंतरिक्ष-रूपता** के बारे में बता रहा था। व्यवहार में देखने में आता है कि हरेक चीज नीचे से नीचे टूटती रहती है। अंत में सबसे छोटी चीज भी बनेगी जो नहीं टूटेगी। वह आकाश ही है। फिर सृष्टि के आरम्भ में पुनः जब इससे चीज बननी शुरु होएगी और पहली चीज बनेगी वह आकाश में **आभासी तरंग** ही होगी क्योंकि **आकाश** के इलावा कुछ भी नहीं था। इसके लिए एक ही तरीका है कि **रनिंग या स्टेंडिंग वेव** बना कर तरंग या कण जैसा दिखा दिया जाए। वैसे भी तरंग को कण के रूप में दिखा सकते हैं, कण को तरंग के रूप में नहीं। इससे भी सिद्ध होता है कि जगत का तरंग रूप ही सत्य है, कण या भौतिक रूप कल्पित व अवास्तविक है, जैसा शास्त्रों में हर जगह कहा गया है। मैं पिछली पोस्ट में भी बता रहा था कि जब मीडियम और पार्टिकल एक ही चीज हो और कण मीडियम के इलावा अन्य कुछ न हो तो पार्टिकल को भी वेव ही बोलेगे। हवा के अंदर पानी का कण बन सकता है, पर पानी के अंदर पानी का कण कैसे बन सकता है। एक ही तरीका है कि आभासी रनिंग या स्टेंडिंग वेव बना कर कण जैसा दिखा दिया जाए। इसलिए शास्त्रों में उस **चिदाकाश** अर्थात **चेतन आकाश** को **नेति-नेति** कह कर पुकारा गया है। नेति शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है, न और इति। न का मतलब नहीं, और इति का मतलब यह है। इसलिए नेति का मतलब हुआ, यह नहीं, मतलब यह **परमात्मा** नहीं है। जो भी दिखेगा, वह नेति ही माना जाएगा। सभी **मूलकणों** को भी नेति ही माना जाएगा, जब तक जो भी मिलते जाएंगे। अंत में जो अदृष्य जैसा काला

आसमान बचेगा, वह भी नेति ही होगा। वह इसलिए क्योंकि उसे भी हम अन्य रूप में देख पा रहे हैं या जान पा रहे हैं। यदि काला या अचेतन आसमान अपने आप के रूप में अनुभव हो तो यह आत्मा नहीं है, क्योंकि अँधेरे आसमान में प्रकाशमान जगतरूपी तरंगें पैदा नहीं हो सकतीं। तरंग और तरंग का आधार एकदूसरे से अलग नहीं हो सकते जैसे तरंग सागर से अलग नहीं। इसलिए वही अपनी आत्मा का असली अनुभव हैं, जिसमें जगतरूपी विचार, दृश्य आदि तरंग की तरह अपृथक दिखें। किसी भी तरह का कोई भी विचार या भाव नेति ही माना जाएगा। अंत में ऐसा तत्त्व बचेगा, जिसकी तरफ हम इशारा नहीं कर पाएंगे, मतलब वह हमारा अपना आत्मरूप होएगा। क्योंकि हम उसे इति अर्थात यह कहकर सम्बोधित नहीं कर पाएंगे, इसलिए वह नेति भी नहीं हो सकता। नेति वही हो सकता है, जिसे हम इति कह पाते हैं। यह **कुण्डलिनी जागरण** के दौरान अनुभव होता है। अर्थात एक मानसिक अनुभूति में स्थित प्रकाश और चेतना उसके अनंत सागर के भीतर एक छोटी सी लहर है, असंबद्ध आधार माध्यम के अंदर एक कण के रूप में नहीं, भौतिक प्रयोगों और जागृति के अनुभवों के अनुसार। दोनों इसको पूरी तरह से साबित करने के लिए कंधे से कंधा मिलाकर चलते हैं। हालांकि अधिक दार्शनिकों और बुद्धिजीवियों के लिए जागृति का आंतरिक अनुभव ही काफी है। इससे बड़ा क्या प्रमाण होगा परमात्मा के बारे में। इसीलिए कहते हैं कि मौन ही ब्रह्म है। अधिकांश वैज्ञानिक व आधुनिकतावादी जो सोचते हैं कि फलां कण मिलेगा या फलां बल का पता चलेगा या फलां थ्योरी सिद्ध होएगी तो सम्भवतः ब्रह्माण्ड के सभी रहस्यों से पर्दा उठ जाएगा। पर ऐसा सच नहीं है। जो भी मिलेगा वह इति ही होगा, इसलिए नेति के दायरे में आएगा। कुछ न कुछ हमेशा बचा रहेगा ढूंढने को। मतलब सृष्टि के मूल का पता नहीं चलेगा। परम मूल मतलब परम आत्मा का पता तभी चलेगा जब कोई इति अर्थात अपने से अलग चीज न मिलकर अपना आत्म रूप महसूस होएगा। यह कुण्डलिनी योग से ही संभव है। इससे सिद्ध होता है कि कुण्डलिनी योग से ही सृष्टि के सभी **रहस्यों** से पर्दा उठ सकता है और वही आदमी की सीखने

की और आगे बढ़ने की जिज्ञासा को पूरा कर सकता है। वही एक लम्बे अरसे की मानसिक प्यास बुझा सकता है।

जितने जीव उतने यूनिवर्स मतलब मल्टीवर्स

ब्रह्माण्ड तो चिदाकाश के अंदर विकाररहित तरंग की तरह है। यह बिल्कुल शुद्ध है **ब्रह्म** की तरह। जल और जलतरंग के बीच क्या अंतर हो सकता है। पर आदमी अपनी भावनाओं, मान्यताओं, व विचारों के साथ इसे रंग देता है। इसलिए यह ब्रह्माण्ड हरेक आदमी या जीव के लिए अलग है। इसीलिए कहते हैं कि सृष्टि बाहर कहीं नहीं, यह सिर्फ आदमी के मन की उपज है। यह बात पूरे **योगवासिष्ठ** ग्रंथ में अनेकों कहानियों और उदाहरणों से स्पष्ट की गई है। इसे ही हम मल्टीवर्स भी कह सकते हैं। कुण्डलिनी योग से जब मन की सोच व भावनाएँ शुद्ध होने से मन की चंचलता का शोर शांत हो जाता है, मतलब उनके प्रति आसक्ति नष्ट हो जाती है, तभी असली माने ओरिजिनल ब्रह्मरूपी ब्रह्माण्ड का अनुभव होता है, जिससे आदमी **आत्मसंतुष्ट** सा रहने लगता है । कुण्डलिनी ही अद्वैत है। **अद्वैत** ही जगत की सभी चीजों को एक जैसा व आत्म-आकाश में तरंग की तरह देखना है। क्वांटम वैज्ञानिक भी सूक्ष्म पदार्थों को इसी तरह अंतरिक्ष से अभिन्न, तरंगरूप व एकरूप देखता है। इलेक्ट्रोन तरंग और फोटोन तरंग अर्थात प्रकाश तरंग एक जैसी ही हैं। कण रूप में ही दोनों अलग-अलग दिखते हैं। मतलब कि तरंग-दृष्टि ही सत्य व अद्वैतपूर्ण है, जबकि कण-दृष्टि ही असत्य व द्वैतपूर्ण है। स्थूल जगत में भी सत्य दृष्टि यही तरंगदृष्टि है, क्योंकि सूक्ष्म पदार्थ ही आपस में जुड़कर स्थूल जगत का निर्माण करते हैं। कण वाली **द्वैतपूर्ण** दृष्टि मिथ्या, भ्रम से भरी, दुनिया में भटकाने वाली व दुःख देने वाली है, और यह आसक्ति के साथ दुनिया को देखने से पैदा होती है। **यह ऐसे ही है जैसे अगर डबल स्लिट एक्सपेरिमेंट** में **मूलकणों** को देखने की कोशिश करें, तो वे कण की तरह व्यवहार करते हैं, अन्यथा अपने असली तरंग के रूप में होते हैं। डबल मजा

लेना हो तो डबल स्लिट के पास खड़े होकर कभी उसे तिरछी नजर से तनिक देख लो और कभी शर्मा कर मुंह फेर लो। हहा।

एक ही स्थान पर अनगिनत ब्रह्मान्डों मतलब पैरालेल यूनिवर्स का अस्तित्व

अनगिनत आयामों का अस्तित्व

क्योंकि भौतिक संसार अंतरिक्ष के अंदर एक आभासी तरंग है, इसलिए एक ही स्थान पर अनगिनत किस्म की आभासी तरंगें बन सकती हैं। हो सकता है कि एक किस्म की तरंग दूसरे किस्म की तरंग से बिल्कुल भी प्रतिक्रिया न करे। फिर तो एक ही स्थान पर एकसाथ अनगिनत स्वतंत्र ब्रह्माण्ड स्थित हो सकते हैं। इससे हो सकता है कि जहाँ मैं इस समय बैठा हूँ, बिल्कुल वहीं पर मतलब मेरे द्वारा घेरे हुए स्थान में ही ब्रह्माण्ड की सभी चीजें और ब्रह्माण्ड के सभी क्रियाकलाप मौजूद हों, क्योंकि किसी आयाम के ब्रह्माण्ड में कुछ होगा, तो किसी में कुछ, इस तरह अनगिनत ब्रह्मान्डों में सबकुछ कवर हो जाएगा। ऐसा भी हो सकता है कि इसी स्थान पर भरेपूरे अनगिनत ब्रह्माण्ड मौजूद हों, क्योंकि छोटा-बड़ा भी सापेक्ष ही होता है, वास्तविक नहीं। इसका मतलब है कि इस तरह से **असंख्य आयामों का अस्तित्व** है। उन्हें हम कभी जान ही नहीं सकते, क्योंकि जिस आभासी तरंग के आयाम में हमारा ब्रह्माण्ड स्थित है, वह दूसरे किस्म की आभासी तरंगों से निर्मित आयामों से बिल्कुल भी प्रभावित नहीं होगा। हो सकता है कि जो **ग्रेट अट्रेक्टर** माने **महान आकर्षक** बल ब्रह्माण्ड को गुब्बारे की तरह फुला रहा है, वह अज्ञात आयामों वाले अनगिनत व भारीभरकम ब्रह्मान्डों के रूप में हों। हम उसे अंतरिक्ष की इन्हेरेंट माने स्वाभाविक **गुरुत्वाकर्षण शक्ति** मान रहे हों, जबकि वह अदृष्य ब्रह्मान्डों से निर्मित हो रही हो।

पदार्थ के ड्यूल नेचर होने का व्यक्तिगत अनुभव रूपी वैज्ञानिक प्रयोग

एकबार मेरे हाथ पर **आसमानी बिजली** गिरने की एक चिंगारी टकराई थी। मुझे ऐसे महसूस हुआ कि किसी ने जोर से एक पत्थर मेरे हाथ की पिछली सतह पर मारा हो। यहाँ तक कि मैं इधरउधर देखने लगा कि किसने पत्थर मारा था। वह बिजली का चक्र लगभग दस मीटर दूर एक लोहे की चद्दर पर गिरा था जिसके आसपास बच्चे भी खेल रहे थे पर वे सौभाग्यवश सुरक्षित बच गए। अद्भुत बात कि उस लोहे की चद्दर पर खरोच तक नहीं आई थी, वह बिल्कुल पहले की तरह थी। कोई चीज वगैरह टकराने की भी कोई आवाज नहीं हुई। इसका मतलब है कि पदार्थ के **मूल कण इलेक्ट्रोन** ने मेरे हाथ पर कण की तरह व्यवहार किया, जबकि उसीने लोहे की चद्दर के ऊपर तरंग के रूप में व्यवहार किया। **फोटोइलेक्ट्रीक इफेक्ट व डबल स्लिट एक्सपेरिमेंट** तो बेजान पदार्थों वाला प्रयोग था, पर यह प्रयोग मैंने अपने जिन्दा शरीर के ऊपर महसूस किया। आपने भी देखा होगा कि कैसे आसमानी बिजली गिरने से पूरी इमारत धराशायी हो जाती है, या उसके छत पर बड़ा सा छेद हो जाता है, ऊँचे पेड़ की काफी लकड़ी बीच में से छिल जाती है, या पूरा पेड़ बीच में से टूट कर दो हिस्सों में बंट जाता है। इसे **संस्कृत** में **वज्रपात** कहते हैं, मतलब एक लोहे के जैसे गोले का आसमान से गिरना, जैसे कोई **बम** गिरता है। इसका मतलब है कि पुराने समय के लोगों को **इलेक्ट्रोन-तरंग** के **कण-प्रभाव** का ज्ञान था। **हिमाचल प्रदेश** के **कुल्लू**में एक **बिजली महादेव मंदिर** है। इसमें स्थित पत्थर के **शिवलिंग** पर हर साल एकबार **बिजली** गिरती है, जिससे यह दो टुकड़ों में बंट जाता है। फिर उन दोनों टुकड़ों को मंदिर के पुजारियों के द्वारा मक्खन से जोड़ दिया जाता है। यह भी तो इलेक्ट्रोन का कण-रूप ही है। मूलकण इतना **सूक्ष्म** होता है कि **लार्ज हैडरोन कोलायडर** में उसका अंदाजा अप्रत्यक्ष रूप से उसके टकराने से हुए प्रभाव को मापकर लगाया जाता है, वैसे ही जैसे मेरे हाथ पर उसने टकराने की **संवेदना** पैदा की, प्रत्यक्ष रूप से तो उसे कभी नहीं जाना जा सकता, देखा जाना तो दूर की बात है।

कुण्डलिनी योग से ही सृष्टि के मूलकण, मूल तरंग व प्लेन्क लेंथ जैसे क्वांटम तत्त्व बनते हैं

मन के अंदर और बाहर दोनों एकदूसरे के सापेक्ष और मिथ्या हैं

मन के बाहर किसी भी चीज या जगत का अस्तित्व सिद्ध नहीं किया जा सकता

दोस्तों मैं पिछली पोस्ट में बता रहा था कि कैसे जगत सत्य नहीं, बल्कि **आत्माकाश** के अंदर एक **आभासी तरंग** है। इसी तरह, स्थूल जगत का भी कोई अस्तित्व नहीं है, इसकी रचना भी मन ने की है। यह कोई आज की खोज नहीं है, जैसा कि कई जगह दिखावा हो रहा है। यह **ऋषिमुनियों** और अन्य अनेकों जागृत व्यक्तियों ने हजारों साल पहले अनुभव कर लिया था, जो उन्होंने आगे आने वाली हमारी जैसी पीढ़ियों के फायदे के लिए **अध्यात्म शास्त्रों** में लिखकर छोड़ा। विशेषकर **योगवासिष्ठ** ग्रंथ में इन तथ्यों का बड़ा सुंदर और वैज्ञानिक जैसा वर्णन है। कभी उसका इतना आकर्षण होता था कि उसको शांति से पढ़ने के लिए या उसे पढ़कर कई लोग घरबार छोड़कर ज्ञानप्राप्ति के लिए निर्जन आश्रम में चले जाते थे। यह पाठक को **क्वांटम** या **पारलौकिक** जैसे आयाम में स्थापित कर देता है। इसमें **पूनरुक्तियां** बहुत ज्यादा हैं, इसलिए बारबार एक ही चीज को विभिन्न आकर्षक तरीकों से दोहराकर यह **माइंडवाश** जैसा कर देता है। कट्टर भौतिकवादी कह सकते हैं कि जागृति से अनुभव हुए आत्माकाश के अंदर मानसिक सूक्ष्म जगत के बारे में तो यह बात सही है, पर बाहर के स्थूल भौतिक जगत के बारे में यह कैसे मान लें। पर वे उसी पल यह बात भूल जाते हैं कि मन के इलावा स्थूल जगत जैसी चीज का कोई अस्तित्व ही नहीं

है, क्योंकि मन के इलावा आदमी कुछ नहीं जान सकता। सिर्फ उस जगत की एक कल्पना कर सकते हैं, पर वह काल्पनिक जगत भी तो सूक्ष्म ही है। फिर कुछ तर्क जिज्ञासु लोग यह कल्पना कर सकते हैं कि **चेतन आकाश** को ही मूल क्यों समझा जाए, **जड़ आकाश** को क्यों नहीं, क्योंकि दुःख अभाव आदि जड़ आकाश के टुकड़े हैं।

अचेतन आकाश भी चेतन आत्माकाश में जगत की तरह आभासी व मिथ्या है

इसका जवाब जागृत लोग इस तरह से देते हैं कि **चिदाकाश-लहर** की तरह ही अचेतन आकाश का अस्तित्व भी नहीं है। वह भ्रम से अपनी आत्मा के रूप में महसूस होता है। वह भ्रम जगत के प्रति **आसक्ति** से बढ़ता है, और **अनासक्ति** से घटता है। जैसे चेतन आकाश में जगत आभासी है, उसी तरह अचेतन आकाश भी। इसीलिए **सांख्य दर्शन** अचेतन आकाश को भी चेतन आकाश की तरह शाश्वत मानता है। हालांकि सर्वोच्च स्कूल ऑफ़ थॉट **वेदांत दर्शन** स्पष्ट करता है कि अचेतन आकाश चेतन आत्माकाश में वास्तविक नहीं आभासी है।

पूर्णता की अनुभूति भाव रूपी चेतन आकाश के अनुभव से ही होती है, अभाव रूपी अचेतन आकाश के अनुभव से नहीं

जरा गहराई से सोचें तो यह अनुभवसिद्ध भी है। किसीको अचेतन आत्माकाश के अनुभव से यह महसूस नहीं होता कि उसे सबकुछ महसूस हो गया या वह पूर्ण हो गया, उसे कुछ जानने, करने और भोगने के लिए कुछ शेष बचा ही नहीं। पर ऐसा चेतन आत्माकाश के अनुभव से महसूस होता है। इससे मतलब स्पष्ट हो जाता है कि असल में चेतनाकाश ही सत्य और अनंत है, आम अनुभव में आने वाला भौतिक जगत तो उसमें मामुली सी, व मिथ्या अर्थात आभासी तरंग की तरह है।

सृष्टि ब्रह्म की तरह अनिर्वचनीय व अनुभवरूप है

जगत कल्पनिक है, मतलब स्थूल भौतिक जगत काल्पनिक है, क्योंकि उस तक हमारी पहुंच ही नहीं है। मानसिक सूक्ष्म जगत काल्पनिक नहीं क्योंकि यह तो अनुभव होता है। हालांकि सूक्ष्म भी स्थूल के सापेक्ष ही है। जब स्थूल ही नहीं तो सूक्ष्म कैसे हो सकता है। मतलब कि स्थूल-सूक्ष्म आदि सभी विरोधी व द्वैतपूर्ण भाव काल्पनिक हैं। इसलिए जगत सिर्फ अनुभव रूप है, **अनिर्वचनीय** है। इसे ही गूंगे का गुड़ कहते हैं। हर कोई **ब्रह्म** में ही स्थित है, केवल स्तर का फर्क है। जागृत व्यक्ति ज्यादा स्तर पर, अन्य विभिन्न प्रकार के निचले स्तरों पर। पूर्ण कोई नहीं।

एक दार्शनिक थोट एक्सीपेरिमेंट

विज्ञान जो अपने को कट्टर प्रयोगात्मक, वास्तविक व वस्तुपरक मानता है, वह भी आजकल बहुत से दार्शनिक विचार-प्रयोग प्रस्तुत कर रहा है, जिन्हें भौतिक प्रयोगों से बिल्कुल भी सिद्ध नहीं किया जा सकता। फिर हम थोट एक्सपेरिमेंट करने से क्यों हिचकिचाएं, क्योंकि कुण्डलिनी का क्षेत्र **भौतिक विज्ञान** से ज्यादा दार्शनिक व अनुभवात्मक है। वह **विचार-प्रयोग** है, सृष्टि के सूक्ष्मतम **मूलकण** को कुण्डलिनी योग का अभ्यास मानना। वैसे शास्त्रों से यह बात प्रमाण-सिद्ध है। **वेद-शास्त्रों** को भी भौतिक प्रत्यक्ष प्रमाण की तरह प्रत्यक्ष प्रमाण माना गया है, कई मामलों में तो भौतिक से भी ज्यादा, जैसे ईश्वर व जागृति के मामलों में।

इड़ा और पिंगला नाड़ियाँ ही सूक्ष्मतम तरंग के क्रेस्ट या शिखा और ट्रफ या गर्त हैं

मूलकणरूपी **स्टैंडिंग वेव** वह हो सकती है, जब **स्वाधिष्ठान** चक्र और **आज्ञा चक्र** के जोड़े को या **मूलाधार** और **सहस्रार** बिंदु के जोड़े को एकसाथ अंगुली से दबाकर उनके बीच कभी **इड़ा** से शक्ति की तरंग दौड़ती है, कभी **पिंगला** से, और

बीचबीच में **सुषुम्ना** से। मूलाधार **यिन** या **पाताल** या **प्रकृति** है,और आज्ञा या सहस्रार **यांग** या **स्वर्ग** या **पुरुष** है। बीच वाली सुषुम्ना नाड़ी ही मूल कण या दुनिया का असली रूप है, क्योंकि उससे ही कुण्डलिनी अर्थात मन अर्थात दुनिया का प्रदुर्भाव होता है।

अस्थायी मूलकण अल्प योगाभ्यास के रूप में है जबकि स्थायी मूलकण सम्पूर्ण योगाभ्यास के रूप में

जैसे आदमी में मूलाधार और सहस्रार के बीच में **शक्ति** का प्रवाह लगातार जारी रहता है, उसी तरह मूलकण में प्रकृति और पुरुष के बीच। इसीलिए तो तरंग लगातार चलती रहती है, कभी स्थिर नहीं होती। यह स्थिर या असली कण के जैसा है। आभासी कण उस प्रारम्भिक योगाभ्यास की तरह है, जिसमें इड़ा और पिंगला में शक्ति का प्रवाह थोड़ी-थोड़ी देर के लिए होता है, और कम प्रभावशाली होता है। इसीलिए ये अस्थायी कण थोड़े ही समय के लिए प्रकट होते रहते हैं, और आकाश में लीन होते रहते हैं।

पार्टिकल मूलाधार से सहस्रार की ओर चल रही तरंग के रूप में है, जबकि एंटीपार्टिकल सहस्रार से मूलाधार को वापिस लौट रही तरंग के रूप में है

सृष्टि के अंत में सभी कणों के एंटीपार्टिकल पैदा हो जाएंगे जो एकदूसरे को नष्ट करके प्रलय ले आएंगे

मूलाधार यहाँ प्रकृति का प्रतीक है, और सहस्रार पुरुष का। उपरोक्त अस्थायी आभासी कण **प्लस और माइनस** रूप के दो विपरीत कणों के रूप में पैदा होते रहते हैं। इसका मतलब है कि कभी न कभी स्थायी मूलकणरूपी तरंग भी खत्म होगी ही, बेशक सृष्टि के अंत में। फिर विपरीत मूलकण रूपी तरंग सहस्रार से मूलाधार मतलब पुरुष से प्रकृति की तरफ उल्टी दिशा में चलेगी।

ऐसे में हरेक प्लस मूलकण के ठीक उलट माइनस मूलकण बनेंगे। इससे **मूलकण और प्रतिमूलकण** एकदूसरे से जुड़कर एकदूसरे को निगल जाएंगे, और सृष्टि का अंत हो जाएगा। इसीको **प्रलय** कहते हैं। फिर लम्बे समय तक कोई तरंग नहीं उठेगी। इसे ही **नारायण का योगनिद्रा** में जाना कहा गया है। मतलब निद्रा में तो है, पर भी अपने पूर्ण आत्मजागृत स्वरूप में स्थित है। विज्ञान कहता है कि पार्टिकल के बनते ही एंटीपार्टिकल भी बन जाता है, पर वह कहीं गायब हो जाता है। हो सकता है कि सृष्टि के अंत में वे एंटीपार्टिकल दुबारा वापस आ जाते हों।

इस समय एंटीपार्टिकल गुरुत्वाकर्षण के रूप में हैं

मैं यह इसलिए कह रहा हूँ क्योंकि कई वैज्ञानिक किस्म के लोग भी ऐसा ही कह रहे हैं। ग्रेविटी अंतरिक्ष में गड्ढे की तरह है। तरंग का आधा भाग भी गड्ढे की तरह होता है। दोनों किसी बल के कारण मिल नहीं पाते। इसलिए कण से निर्मित ग्रेविटी कण को अपनी तरफ खिंचती तो है, पर पूरी तरह उससे मिल नहीं पाती। जब तरंग का ऊपर का आधा भाग ही दिखता है, तो वह कण की तरह ही दिखता है। जब ग्रेविटी का गड्ढा भी उसके साथ देखा जाता है, तो वह कण तरंग रूप में आ जाता है। इसका मतलब है कि प्रलय के समय **गुरुत्वाकर्षण** ही सारी सृष्टि को निगल जाएगा।

क्वांटम ग्रेविटी का अस्तित्व है

उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि **इलेक्ट्रोन**, **क्वार्क** आदि मूलकणों की भी ग्रेविटी है। यह सूक्ष्म कण द्वारा निर्मित अंतरिक्ष के आभासी सूक्ष्म गड्ढे के जैसे एंटीपार्टिकल के रूप में है। इसे विज्ञान ढूंढ नहीं पा रहा है, पर क्वांटम ग्रेविटी के अस्तित्व को नकार भी नहीं पा रहा है।

मूल तरंग का पहला नोड प्रकृति है, और दूसरा नोड पुरुष है

ये चित्रोक्त बिंदू स्टैंडिंग वेव के दो नोड हैं। एक कोने पर ब्लू डॉट **नेगेटिव** या **नॉर्थ पोल** नोड है और दूसरे कोने पर रेड डॉट **पॉजिटिव या साउथ पोल नोड** है। दोनों तरफ को झूलती तरंग ही सृष्टि बनाने के लिए इच्छा या सोचविचार है। केंद्रीय रेखा ही **ध्यान** रूपी या भाव रूप **सुषुम्ना** है, जो सृष्टि बनाने का पक्का निश्चय है। इसीलिए कहते हैं कि **ब्रह्मा** ने ध्यान रूपी **तप** से सृष्टि को रचा। मतलब प्रकृति एक नोड है और पुरुष दूसरा नोड। वैसे भी सृष्टि की उत्पत्ति प्रकृति-पुरुष संयोग से मानी गई है। प्रकृति अंधेरा आसमान है, और पुरुष स्वयंप्रकाश आकाश है। दोनों शाश्वत हैं। प्रकृति नेगेटिव नोड है, और पुरुष पॉजिटिव नोड है। इन दोनों के बीच बनने वाली स्थिर तरंग ही सबसे छोटा मूलकण है। इस तरह के कण आकाश में पॉप आउट होते रहते हैं और उसीमें मर्ज होते रहते हैं। इनको किसी चीज से जब स्थिरता मिलती है तो ये आगे से आगे जुड़कर अनगिनत कण बनाते हैं। इससे सृष्टि का विस्तार होता है। इसका मतलब कि सृष्टि का प्रत्येक कण योग कर रहा है। **पूरी सृष्टि योगमयी** है।

मूलकण एक कुण्डलिनी योगी है, जो कुण्डलिनी ध्यान कर रहा है

सूक्ष्मतम तरंग की नोड से नोड के बीच की न्यूनतम दूरी प्लेंक लेंथ बनती है

वैज्ञानिकों को क्वार्क से छोटा कोई कण नहीं मिला है। यह भी हो सकता है कि क्वार्क से छोटी तरंगें भी हैं, जैसा कि **स्ट्रिंग थ्योरी** कहती है, पर वे क्वार्क के स्तर तक बढ़ कर ही अपने को कण रूप में दिखा पाती हैं। केवल कण के स्तर पर ही तरंगें पकड़ में आती हैं। हो सकता है कि सबसे छोटी तरंग प्लेंक लेंथ के बराबर है, जो सबसे छोटी लम्बाई संभव है। उस प्लेंक तरंग का एक नोड प्रकृति है, और दूसरा पुरुष। वैसे प्रकृति और पुरुष एक ही हैं, केवल आभासी अंतर है। इस तरह प्लेंक लेंथ भी वास्तविक नहीं आभासिक है। आकाश में तरंग भी तो आभासी ही हो सकती है, असली नहीं। प्रकृति मतलब

मूलाधार से एक शक्ति की तरंग पुरुष मतलब सहस्रार की तरफ उठती है, मतलब देव ब्रह्मा योगरूपी तप के लिए ध्यान लगाते हैं। वह तरंग इड़ा और पिंगला के रूप में बाईं और दाईं तरफ बारी-बारी से झूलने लगती है, मतलब ब्रह्मा ध्यान में डूबने की कोशिश करते हैं। ध्यान थोड़ा स्थिर होने पर शक्ति की तरंग बीच वाली आभासी जैसी सुषुम्ना नाड़ी में बहने लगती है। इसीलिए कण भी आभासी या एज्यूम्ड ही है, असली तो तरंग ही है। इससे कुण्डलिनी चित्र मन में स्थिर हो जाता है, मतलब पहला और सबसे छोटा मूलकण बनता है। फिर तो आगे से आगे सृष्टि बढ़ती ही जाती है। आज भी तो सारी सृष्टि बाहर के खुले व खाली अंतरिक्ष की तरफ भाग रही है, मतलब वही मूल स्वभाव बरकरार है कि प्रकृति से पुरुष की तरफ जाने की होड़ लगी है। सृष्टि की हरेक वस्तु और जीव का एक ही मूल स्वभाव है, अचेतनता से चेतनता की ओर भागना।

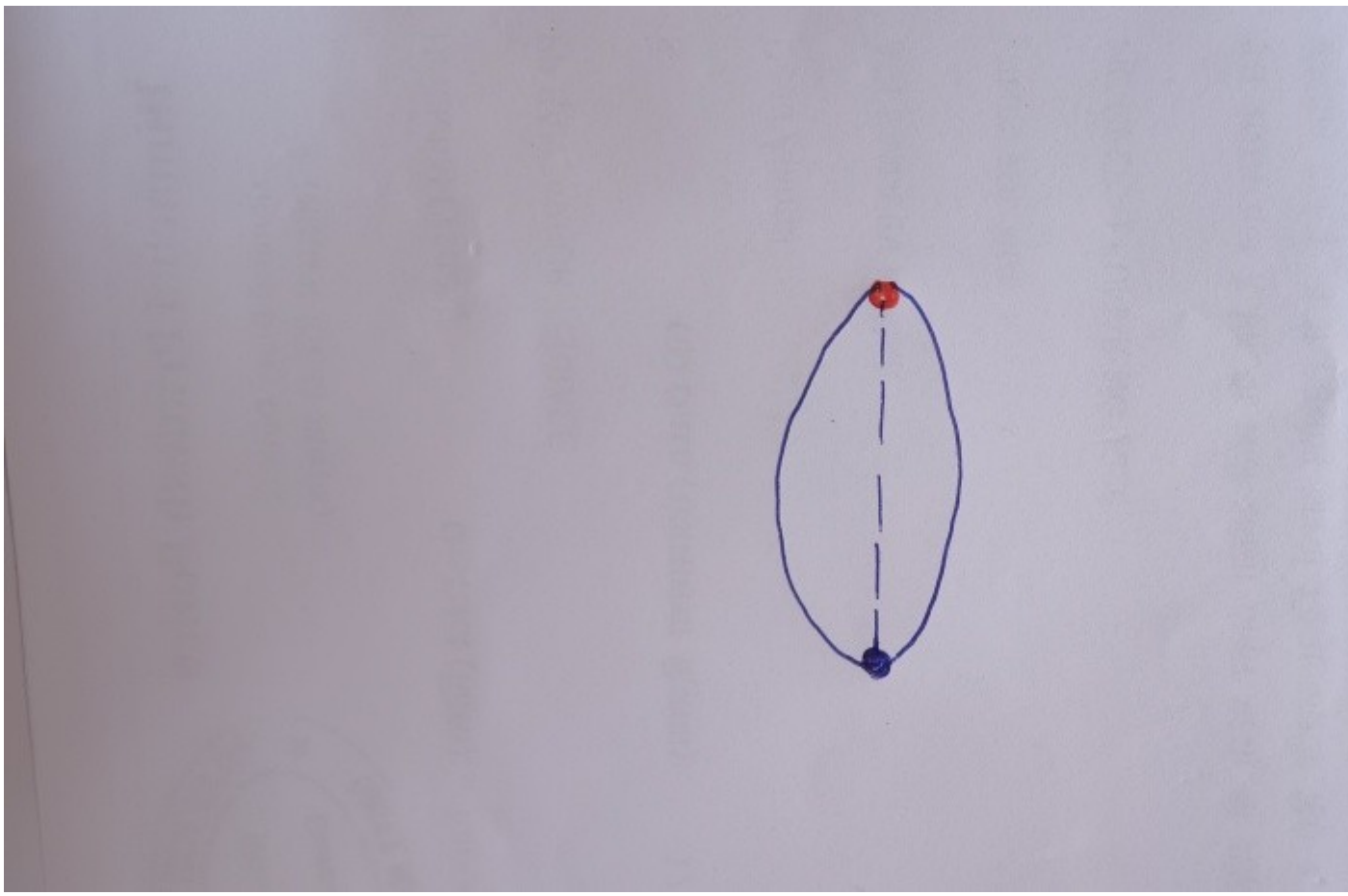

मूलकण

कुण्डलिनी योग भी एक लहर ही है

दोस्तों, मैं पिछली पोस्ट में एक **विचार-प्रयोग** के माध्यम से बता रहा था कि सृष्टि के अंत में कैसे **गुरुत्वाकर्षण** सभी चीजों को निगल जाएगा। कई वैज्ञानिक भी ऐसा ही अंदाजा जता रहे हैं, जिसे **बिग क्रन्च** नाम दिया गया है। साथ में मूलकण के तरंग स्वभाव के बारे में भी बात चली थी। हवा, पानी आदि भौतिक तरंगों के मामले में देखने में आता है कि क्रेस्ट और ट्रफ एकसाथ नहीं बन सकते। जब क्रेस्ट बनाने के लिए जल सतह से ऊपर की तरफ उठेगा, तो उसी समय उसी जगह पर वह ट्रफ के रूप में सतह के नीचे नहीं डूब सकता। पर आकाश की तरंग के मामले में ऐसा हो सकता है, क्योंकि यह आभासी है, और इसके लिए किसी भौतिक वस्तु या माध्यम की जरूरत नहीं है। इसीलिए एकसाथ **त्रिआयामी क्रेस्ट और ट्रफ** बनने से मूलतरंग मूलकण की तरह भी दिखती है, और उसके जैसा व्यवहार भी करती है, जैसा कि पिछली पोस्ट में चित्रोक्त किया गया है। मूलकण रूपी तरंग ऐसे ही क्रेस्ट और ट्रफ बनाते हुए आगे से आगे बढ़ती रहती है, क्योंकि **प्रकृति और पुरुष** हर जगह विद्यमान हैं, और प्रकृति से पुरुष की तरफ दौड़ हर जगह चली रहती है। इसीलिए मूलकण कई जगह एकसाथ दिखाई देते हैं। पिछले क्रेस्ट से अगला ट्रफ बनता है, और पिछले ट्रफ से अगला क्रेस्ट, क्योंकि प्रकृति को **सीमेट्री** प्यारी है। इस तरह अनगिनत तरंगों के रूप में अंतरिक्ष में अनगिनत सूक्ष्म लूप बन जाते हैं। मतलब पूरा आकाश लूपों में बंटा हुआ सा लगता है। **क्वांटम लूप थ्योरी** भी यही कहती है कि अंतरिक्ष सपाट न होकर सूक्ष्मतम टुकड़ों में बंटा है। उससे छोटे टुकड़े नहीं हो सकते। पर अगर सिद्धांत से देखा जाए तो हरेक चीज टूटते हुए सबसे छोटी जरूर बनेगी। वह विशेषता से रहित शून्य आसमान ही है। जिसे अंतरिक्ष का क्वांटम लूप कहा गया है, वह दरअसल शून्य अंतरिक्ष का अपना स्वाभाविक रूप नहीं है, बल्कि **अंतरिक्ष** में आभासी मूलकण है। इससे इन सभी बातों का उत्तर मिल जाता है कि तरंग कण के जैसे क्यों व्यवहार करती है, **स्टैंडिंग वेव** और **प्रॉपेगेटिंग वेव** कैसे बनती है आदि। कोई भी लहर वास्तव में

ध्यानरूप ही है, जैसा पिछली पोस्ट में बताया गया है। **इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना** नाड़ियाँ लहर के रूप में ही चलती हैं। लहर में कोई चीज आगे नहीं बढ़ती, लहर बनाने वाली चीज केवल अपने स्थान पर आगे-पीछे या ऊपर-नीचे कांप कर अपनी पूर्ववत जगह पर आ जाती है। केवल लहर आगे बढ़ती है। वैसे भी **शून्य** जैसे अंतरिक्ष में कोई चीज है ही नहीं प्रकट होने को। इसलिए एकमात्र लहर का ही विकल्प बचता है। वहाँ तो अपनी जगह पर कांपने के लिए भी कोई चीज नहीं है। इसलिए झूठमूठ में ही कंपन दिखाया जाता है। यह नहीं पता कि कैसे। प्रकाश जिसको ईश्वररूप या दैवरूप माना जाता है, लहर के रूप में ही चलता है। इसी तरह अग्नि भी।

नाड़ी की गति भी लहर के रूप में ही होती है

नाड़ी में संवेदना लहर के रूप में आगे बढ़ती है। इसमें **सोडियम-पोटाशियम पम्प** काम करता है। सोडियम और पोटाशियम आयन अपनी ही जगह पर नाड़ी की दीवार से अंदर-बाहर आते-जाते रहते हैं, और संवेदना की लहर आगे बढ़ती रहती है।

लहर सूचना को आगे ले जाती है

तालाब में कहीं पर कंकड़ मारने से उसके पानी पर लहर पैदा होकर चारों तरफ फैल जाती है। उससे जलीय जंतु संभावित खतरे से सतर्क हो जाते हैं। जमीन पर चलने से उस पर एक लहर पैदा हो जाती है, जिसे सांप आदि जंतु पकड़कर सतर्क हो जाते हैं या भाग जाते हैं। वायु से आवाज के रूप में सूचना संप्रेषण के बारे में तो सभी जानते हैं। मूलाधार से संवेदना की लहर सहस्रार तक जाती है, जिससे सहस्रार सतर्क अर्थात क्रियाशील हो जाता है। सतर्क कालरूपी शत्रु से होता है, जो हर समय मौत के रूप में आदमी के सामने मुंह बाँए खड़ा रहता है। इसलिए **सहस्रार अद्वैत** के साथ सांसारिक अनुभूतियों के रूप में जागृति या **आध्यात्मिक जीवनयापन** के लिए प्रयास

करता है। वैसे दुनियादारी में सफलता भी सहस्रार से ही मिलती है, क्योंकि वही अनुभूति का केंद्र है।

जीवात्मा विद्युतचुंबकीय तरंगों की सहायता से अपने अंदर आभासी संसार को महसूस करता है

नाड़ी में **चार्जड पार्टिकलस** की गति से आसपास के आकाश में विद्युत्चुंबकीय तरंग बनती है। उस तरंग से सहस्रार के **आत्म-आकाश** में आभासी तरंगें बनती महसूस होती हैं। इसीलिए कहते हैं कि आत्मा का स्थान सहस्रार है। यह आश्चर्य की बात है कि अनगिनत स्थानों पर विद्युत्चुंबकीय तरंगों से आकाश में अनगिनत आभासी कलाकृतियाँ बनती रहती हैं, पर वे केवल जीवों के मस्तिष्क के सहस्रार में ही आत्मा को महसूस होती हैं। अगर उसकी बनावट व उसकी कार्यप्रणाली की सही जानकारी मिल जाए तो हो सकता है कि **कृत्रिम जीव** व **कृत्रिम मस्तिष्क** का निर्माण भी **विज्ञान** कर पाए।

कुण्डलिनी योग से ही ब्रह्माण्ड एक देवता या विशालकाय एलियन बनता है

शून्य में विद्युत्चुंबकीय तरंग

दोस्तों, मैं पिछली पोस्ट में बता रहा था कि **विद्युत्चुंबकीय क्षेत्र** या तरंग से मानसिक दुनिया बनती है। तो फिर यह क्यों न मान लिया जाए कि बाहर का भौतिक संसार भी इन्हीं तरंगों से बनता है। यही अंतर है कि **मानसिक संसार** में ये तरंगें अस्थिर होती हैं, और आँखों आदि इन्द्रियों के माध्यम से बाहर से लाई जा रही सूचनाओं के अनुसार लगातार बदलती रहती हैं, पर बाहर के स्थूल जगत में ये किसी बल से स्थिरता पाकर **स्थायी मूलकणों** की तरह व्यवहार करने लगती हैं, जिनसे दुनिया आगे से आगे बढ़ती जाती है। दिमाग़ में तो विद्युत्चुंबकीय तरंग मूलाधार से आ रही ऊर्जा से बनती है, पर बाहर शून्य अंतरिक्ष में यह ऊर्जा कहाँ से आती है, यह खोज का विषय है।

फील्ड से कण और कण से फील्ड का उदय

क्वांटम फील्ड थ्योरी सबसे आधुनिक और स्वीकृत है। इसके अनुसार हरेक कण और बल की एक सर्वव्यापी फील्ड मौजूद होती है। फील्ड मतलब प्रभाव क्षेत्र, कण की फील्ड मतलब कण का प्रभाव क्षेत्र। अंतरिक्ष शून्य नहीं बल्कि इन फील्डों से भरा होता है। फील्ड मतलब पोटेंशल, तरंग व कण बनाने की योग्यता। यह फील्ड एक सबसे हल्के स्तर की लहर होती है। मुझे लगता है यह ऐसे है कि जब एक कंकड़ एक जल-सरोवर में गिराया जाता है तो एक मुख्य लहर के साथ छोटी लहरों के झुंड के रूप में विक्षोभ पैदा होता है। मुख्य बड़ी तरंग कण के समान है और छोटी तरंगें उसके क्षेत्र या फील्ड के समान हैं। जिस क्षेत्र तक इन सूक्ष्म तरंगों का अनुभव होता है, वह कण के रूप में स्थित उस मुख्य तरंग का फील्ड का दायरा होता है। जब **इलेक्ट्रोन की फील्ड** में किसी पॉइंट को एनर्जी मिलती है तो वहां फील्डरूपी छोटी लहर

का एम्प्लीचूड या आयाम बढ़ जाता है, और वहाँ एक कण का उदगम होता है। वह इलेक्ट्रोन है। ये आधारभूत फील्ड सबसे छोटे कण **क्वार्क** से भी सूक्ष्म होती हैं। इसी तरह इलेक्ट्रोन के चारों तरफ भी एक फील्ड बनती है। मतलब इलेक्ट्रोन रूपी बड़ी लहर के चारों तरफ भी एक सूक्ष्म लहरों का क्षेत्र बन जाता है। वह **प्रोटोन** से भी इसी **इलेक्ट्रोमेग्नेटीक फील्ड** से ही दूर से आकर्षित होकर उससे जुड़ जाता है। इस आकर्षण की फील्ड तरंगों से भी विशेष सूक्ष्म कण सम्भवतः फोटोन पैदा होता है, जो इस आकर्षण को क़ायम करता है। इस तरह फील्ड से कण और कण से फील्ड पैदा होकर बाहर की स्थूल संसार रचना को आगे से आगे बढ़ाते रहते हैं।

अव्यक्त से व्यक्त और व्यक्त से अव्यक्त का उदय

मन भी तो क्वांटम फील्ड की तरह होता है। इसमें हरेक किस्म का संकल्प अदृष्य रूप अर्थात अदृष्य लहर के रूप में रहता है। इसे सांख्य दर्शन के अनुसार अव्यक्त कहते हैं। जब इसे मूलाधार से एनर्जी मिलती है, तब इस **मानसिक क्वांटम फील्ड** की लहरें बड़ी होने लगती हैं, जो स्थूलकण रूपी चित्रविचित्र संसार पैदा करती हैं। उससे और फील्ड पैदा होती है, जिससे और विचार पैदा होते हैं। इस तरह यह सिलसिला चलता रहता है और आदमी के विचार रुकने में ही नहीं आते। अव्यक्त से व्यक्त और व्यक्त से अव्यक्त पैदा होकर भीतरी मानसिक संसार रचना को आगे से आगे बढ़ाते रहते हैं।

क्वांटम भौतिक विज्ञान और आध्यात्मिक मनोविज्ञान के बीच समानता

प्रकृति या **अव्यक्त** ही वह हल्के स्तर की आधारभूत लहर है। अव्यक्त व्यक्त से ही बना है, अव्यक्त मतलब हल्के स्तर का व्यक्त। हालांकि उसके मूल में भी निश्चेष्ट या **अवर्णनीय पुरुष** ही है। अंत के पैराग्राफ में बताऊंगा कि निश्चेष्ट या गतिहीन पुरुष क्यों कुछ काम नहीं कर पाता। क्यों उसे मूक

दर्शक की तरह माना जाता है, जो अपनी उपस्थिति मात्र से प्रकृति की मदद तो करता है, पर खुद कुछ नहीं करता। सारा काम प्रकृति ही करती है। पुरुष अर्थात शुद्ध आत्मा एक **चुंबक** की तरह है जिसकी तरफ खिंच कर ही प्रकृति से सब काम अनायास ही खुद ही होते रहते हैं। इसीलिए कहते हैं कि जो भगवान के सहारे है, उसका जीवन खुद ही अच्छे से कट जाता है। पर **भगवान** असली और अच्छी तरह से समझा हुआ होना चाहिए, जो **कुण्डलिनी योग** से ही संभव है। जैसे हमारा हरेक कर्म और विचार संस्कार रूप से पहले से ही सूक्ष्म रूप में हमारी अव्यक्त प्रकृति के रूप में मौजूद होता है, जिसे **सूक्ष्म शरीर** कहते हैं, उसी तरह हरेक क्वांटम कण भी अपनी क्वांटम फील्ड के रूप में पहले से ही मौजूद होता है। **व्यष्टि मूलाधार** मतलब शारीरिक मूलाधार से मिल रही शक्ति से व्यष्टि अव्यक्त मतलब शरीरबद्ध अव्यक्त या व्यष्टि फील्ड में क्षोभ पैदा होता है, जिससे विभिन्न लहरों के रूप में विचारों मतलब व्यष्टि मूलकणों का उदय होता है। इसी तरह **समष्टि मूलाधार** अर्थात ब्रह्माण्डव्याप्त मूलाधार अर्थात मूल प्रकृति से उत्पन्न शक्ति से समष्टि क्वांटम फील्ड में क्षोभ पैदा होता है, जिससे समष्टि मूलकण पैदा होते हैं। पर समष्टि जगत में ये शक्ति कहाँ से आती है? **दार्शनिक** तौर पर तो मूल प्रकृति को समष्टि मूलाधार मान सकते हैं, क्योंकि दोनों में मूल शब्द जुड़ा है, और दोनों ही सब सांसारिक रचनाओं के मूल आधार या नींव के पहले पत्थर हैं हैं, पर इसे वैज्ञानिक रूप से कैसे सिद्ध करेंगे? व्यष्टि के मूलाधार की तरह समष्टि मूलाधार में भी कोई **सम्भोग** क्रिया और उससे उत्पन्न सम्भोग-शक्ति होनी चाहिए। तो उसे पुरुष और प्रकृति के बीच सम्भोग क्यों न माना जाए, जिसका इशारा शास्त्रों में किया गया है।

संतानोत्पत्ति की प्रक्रिया तांत्रिक कुण्डलिनी योग का भौतिक मार्ग ही है

दरअसल जीवों का जो अव्यक्तरूप सूक्ष्म शरीर है, वह मरने के बाद और भी सूक्ष्म हो जाता है, क्योंकि उस समय उसे स्थूल शरीर से बिल्कुल भी ऊर्जा

नहीं मिल रही होती है। वह एक घने अँधेरे **आत्माकाश** की तरह हो जाता है, जिसका अंधेरा उसमें छिपे हुए अव्यक्त जगत के अनुसार होता है। वह अव्यक्त जगत भी व्यक्त जगत के अनुसार ही होता है। इसीलिए सब जीवों के सूक्ष्म शरीर उनके स्थूल स्वभाव के अनुसार अलग-अलग होते हैं। इस तरह से बहुत से जीवों के अव्यक्त आत्माकाश जब समष्टि **अव्यक्ताकाश मतलब मूल प्रकृति** के साथ कंधे से कंधा मिलाकर एक निश्चित सीमा से ज्यादा अव्यक्त भाव अर्थात अंधकारमय आकाश बना देते हैं, तब वहाँ से एक शक्ति की लहर पुरुष की तरफ छलांग लगाती है। इसी से क्वांटम फील्ड में लहरों का एम्प्लीच्युड आदि बढ़ने से मूलकणों का उदय और सृष्टि का विस्तार शुरु होता है। यह ऐसे ही है जैसे कभी कोई आदमी अपनी सहन-सीमा से ज्यादा ही **गम या अवसाद के अँधेरे में** डूबने लग जाए, तो वह सम्भोग की सहायता से अपने मूलाधार के अँधेरे में डूबे अपने अव्यक्त मानसिक जगत को ऊपर चढ़ती हुई शक्ति के साथ **सहस्रार** की तरफ भेजने की कोशिश करता है, ताकि उसके विचारों का मानसिक संसार पुनः प्रकाशित होने लगे। शक्ति तो खुद एक वाहक या बल है, जो अव्यक्त जगत को व्यक्त बनाने में मदद करती है। शास्त्रों में भी यही कहा है कि जब जीवों के कर्म, फल देने को उन्मुख हो जाते हैं, अर्थात जब जीव अंधकार से ऊबने जैसे लगते हैं, तब वे **प्रलय** के बाद पुनः **सृष्टि** को प्रारम्भ करने की प्रेरणा देते हैं। यह सामूहिक अर्थात समष्टि सृष्टि और प्रलय है। व्यक्तिगत सृष्टि और प्रलय तो हरेक जीव के जन्म और मरण के साथ चली ही रहती है। सहज व प्राकृतिक मृत्यु के बाद कुछ समय तो जीव चैन की बंसी बजाता हुआ अव्यक्त में आराम करता है, फिर जल्दी ही उससे **ऊब** जाता है। इसलिए उस अव्यक्तरूप जीव को व्यक्त करने के लिए शक्ति पुरुष की तरफ बढ़ने की कोशिश करना चाहती है। देखा जाए तो शक्ति जाती कहीं नहीं है, क्योंकि पुरुष, प्रकृति और शक्ति तीनों व्यष्टि मूल प्रकृति में साथ-साथ ही रहते हैं। ऐसे ही जैसे अव्यक्त, व्यक्त और उनको बनाने वाली शक्ति मस्तिष्क में ही रहते हैं, पर अव्यक्त जगत मूलाधार से ऊपर चढ़ता हुआ महसूस होता है, क्योंकि पुरुष या मस्तिष्क की शक्ति को प्रेरित करने वाला विशेष **सेकसुअल**

बल मूलाधार से ऊपर चढ़ता है। उसके लिए सम्भोग के माध्यम से एक आदमी और एक औरत का आपसी मिलन जरूरी होता है। संयोगवश उस मृत जीव की जीवात्मा किसी सम्भोगरत आदमी और औरत के जोड़े के मिश्रित मूलाधार में स्थित अव्यक्त जगत से मेल खाती है। दोनों का मिश्रित अव्यक्त जगत संभोग-शक्ति के माध्यम से ऊपर उठते हुए दोनों के हरेक चक्रों में दबी हुई भावनाओं व छिपे हुए विचारों को अपने साथ ले जाकर सहस्रार में आनंद के साथ व्यक्त हो जाता है, और एकदूसरे के सहस्रार चक्रों में आपस में मिश्रित ही बना रहता है। आदमी के सहस्रार से वह मिश्रित जगत आगे के चैनल से शक्ति के साथ नीचे उतरकर **वीर्य** में रूपांतरित होकर औरत के **गर्भ** में प्रविष्ट होकर एक बालक का निर्माण करता है। इसीलिए बालक में माता और पिता दोनों के गुण मिश्रित होते हैं। इसीलिए **मांबाप** के व्यवहार का बच्चों पर गहरा असर पड़ता है, क्योंकि तीनों की एनर्जी आपस में जुड़ी होती है। **इसीलिए व्यवहार में देखा जाता है कि सम्भोग सुख के साथ प्रेम से रमण करने के आदी दम्पत्ति की संतानें बहुत तरक्की करती हैं, भौतिक रूप से भी और आध्यात्मिक रूप से भी। इसके विपरीत आपस में अजनबी जैसे रहने वाले दंपत्तियों के बच्चे अक्सर कुंठित से रहते है**ं। यह अलग बात है कि कई अच्छी किस्मत वाले लोग इधरउधर से गुजारा कर लेते हैं। हाहा। अनुभवी **तंत्रयोगी** सम्भोग की, जगत को व्यक्त करने वाली कुण्डलिनी शक्ति को अपने सहस्रार में केवल एक ही **ध्यानचित्र** पर **फोकस** करते हैं, और उसे वीर्य रूपी **बीज** में नीचे न उतारकर लम्बे समय तक वहीं रोककर रखते हैं, जिससे वह मानसिक चित्र जागृत हो जाता है। इसे ही **तांत्रिक कुण्डलिनी जागरण** कहते हैं।

पूरा ब्रह्माण्ड ही एक एलियन

इन उपरोक्त तथ्यों का मतलब है कि ब्रह्माण्ड भी एक **विशालकाय जीव** या मनुष्य की तरह व्यवहार करता है। इससे वैदिक उक्ति, "**यत्पिंडे तत् ब्रह्मान्डे**" यहाँ भी वैज्ञानिक रूप से सिद्ध हो जाती है। इसका मतलब है कि

जो कुछ भी छोटी चीज जैसे शरीर में है, वही ब्रह्माण्ड में भी है, अन्य कुछ नहीं। **पिंड** यहाँ **शरीर** को ही कहा है, अन्य किसी चीज को नहीं, क्योंकि किसीकी मृत्यु के बाद जब उसे **श्राद्ध** आदि के द्वारा खाने-पीने की चीजें दी जाती हैं, उसे **पिंडदान** कहते हैं। क्योंकि अगर हरेक छोटी चीज के बारे में कहना होता तो अंडे, खंडे आदि दूसरे शब्द ज्यादा बेहतर होते, पिंडे नहीं। दूसरा, **पंजाबी भाषा** में वह स्थान जहाँ लोग सामूहिक रूप से एकसाथ रहते हैं, जिसे गाँव कहते हैं, वह पिंड कहलाता है। मूल प्रकृति ब्रह्माण्ड का मूलाधार है, और चेतन पुरुष या परमात्मा इसका सहस्रार या उसमें कुण्डलिनी जागरण है। चित्रविचित्र संसारों की रचना के रूप में ही इसका जीवनयापन या **कर्मयोग** या इसका कुण्डलिनी जागरण की तरफ बढ़ना है। ऐसा यह **अद्वैत** के साथ करता है। शास्त्रों में ऐसा ही लिखा है कि **ब्रह्मा** खुद कहते हैं कि वे अद्वैतभाव के साथ सृष्टि की रचना करते हैं, जिससे वे **जन्ममरण के बंधन** में नहीं पड़ते। इसलिए यही इसका कुण्डलिनी योग है। अद्वैत और कुण्डलिनी योग आपस में जुड़े हुए हैं। सृष्टि का संपूर्ण निर्माण ही इसका कुण्डलिनी जागरण है। जैसे कुण्डलिनी जागरण के बाद आदमी को लगता है कि उसने सबकुछ कर लिया, इसी तरह सबकुछ कर लेने के बाद ब्रह्मा को कुण्डलिनी जागरण होता है, यह इसका मतलब है। इसके बाद सृष्टि निर्माण से उपरत होकर इसका **संन्यास** लेना ही सृष्टि विस्तार का धीमा पड़ना और रुक जाना है। देहांत के बाद इसका **परम तत्त्व** में मिल जाना ही प्रलय है। शास्त्रों में इसीलिए देव ब्रह्मा की कल्पना की गई है, सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड ही जिसका शरीर है। आजकल **विज्ञान** भी इस अवधारणा पर विश्वास करने लग गया है। इसीलिए एक **वैज्ञानिक थ्योरी** यह भी सामने आ रही है कि हो सकता है कि पूरा ब्रह्माण्ड ही एक विशालकाय एलियन हो।

जिसे हम अंधेरनुमा शून्य या अव्यक्त कहते हैं, वह भी खाली नहीं बल्कि सीमित उतार-चढ़ाव वाली जगतरूपी तरंगों से भरा होता है

अगर चैतन्यमय आत्माकाश या परमात्मा में कोई बहुत ज्यादा स्थित हो जाए या लगातार आत्माकाश में ही स्थित रहने लगे तो वह कुछ काम भी नहीं कर सकता। वह **पराश्रित** व नादान सा रहता है संन्यासी की तरह। इसका मतलब है कि उस समय उसमें व्यक्त दुनिया अव्यक्त आकाश के रूप में नहीं रहती। मतलब वह शुद्ध आत्माकाश बन जाता है। मतलब उसके आत्माकाश में क्वांटम फील्ड नाम की बिल्कुल भी **वाइब्रेशनस** नहीं रहतीं। वह पूर्ण चिदाकाश बन जाता है। इसी वजह से स्थूल ब्रह्माण्ड में भी उस जगह आकाश खाली होता है, जहाँ वाइब्रेशन नहीं होतीं। अन्य स्थान **ग्रहों-सितारों** से भरे होते हैं। **वर्चुअल पार्टिकल** तो बनते रहते हैं थोड़ी-बहुत वाइब्रेशन से। मतलब थोड़ा-बहुत काम-वाम तो वे संन्यासी भी कर लेते हैं, पर कोई निर्णायक कार्य-अभियान या व्यापार-धंधा नहीं चला पाते। हाँ, एक बीच वाला हरफनमौला तरीका भी है कि तांत्रिक योग से आत्माकाश में लगातार **कंपन** बनाते भी रहो और मिटाते भी रहो, और सबकुछ करते हुए भी उससे अछूते बने रहो।

कुण्डलिनी योग विज्ञान ब्लैक होल में भी झाँक सकता है

शिव की तरह शक्ति भी शाश्वत है

दोस्तों, मैं पिछली पोस्ट में बता रहा था कि शक्ति कहाँ से आती है। **शाक्त** कहते हैं कि शिव की तरह शक्ति भी शाश्वत है। यह मानना ही पड़ेगा, क्योंकि अगर शक्ति नाशवान है, तब वह सृष्टि के प्रारम्भिक **शून्य आकाश** में कहाँ से आती है। अगर शिव को ही एकमात्र अविनाशी और मूल तत्त्व माना जाए तो एक नया स्पष्टीकरण है। **सूक्ष्मशरीर** रूपी **क्वांटम फ्लकचूएशनस** आत्मा में रिकॉर्ड हो जाती हैं। उन क्वांटम फ्लकचूएशनस के अनुसार ही आत्मा में अंधेरा होता है। मतलब क्वांटम फ्लकचूएशनस की किस्म और मात्रा के अनुसार ही आत्मा का अंधेरा भिन्नता रखता है। यह नियम **व्यष्टि और समष्टि,** दोनों ही मामलों में लागू होता है। इसे ही कारण शरीर कहते हैं। आत्मा का वही अंधेरा फिर सृष्टि के प्रारम्भ में अपने अनुसार पुनः क्वांटम फ्लकचूएशन पैदा करता है। मतलब **कारण शरीर** या कारण ब्रह्माण्ड सूक्ष्मशरीर या **सूक्ष्म ब्रह्माण्ड** के रूप में आ जाता है। उससे फिर स्थूल शरीर या स्थूल ब्रह्माण्ड बन ही जाता है। पर प्रश्न फिर भी बचा ही रहता है। फौरी तौर पर तो यही उत्तर बनता है कि अँधेरे अंतरिक्ष के रूप में शक्ति अर्थात कारण शरीर तो रहता है, पर अनुभव के रूप में उसका अपना अस्तित्व नहीं होता, अनुभव के रूप में वह परमात्मा शिवरूप ही होता है। या कह लो कि शक्ति शून्य शिव से एकाकार हो जाती है।

सृष्टि के प्रारम्भ में शक्ति शिव से अलग होकर सृष्टि की रचना प्रारम्भ करती है

जैसे सरोवर का जल हमेशा हिलता रहता है वैसे ही **अंतरिक्ष** में हमेशा **सूक्ष्म तरंगें** उठती रहती हैं। दोनों में कभी हवा आदि से लहरें ज्यादा बढ़ जाती हैं।

यही **एनर्जी से कण** का उदय है। अंतरिक्ष में ये तरंगें आकाशीय पिंडों के आपस में टकराने से बनती हैं। यह तो वैज्ञानिक भी बोलते हैं कि जब अंतरिक्ष में ज्यादा उथलपुथल मचती है, तो नए **ग्रहों व सितारों** आदि का ज्यादा निर्माण होता है। पर शुरुआत के शून्य अंतरिक्ष में यह उथलपुथल कैसे मचती है, यह खोज का विषय है।

ब्लैक होल में ब्रह्माण्ड के जन्म और मृत्यु का राज छिपा हो सकता है

तारा जब मरता है तो वह **सिंगुलेरिटी** तक कंम्प्रेस होकर ब्लैक होल बन जाता है। वह सिंगुलेरिटी **अव्यक्त आकाश** में विलीन हो जाती है, क्योंकि किसी चीज के छोटा होने की अंतिम सीमा शून्य आकाश में जाकर ही खत्म होती है। मतलब वह पहले स्बसे छोटा **मूलकण** बनता है। उसकी ग्रेविटी बहुत ज्यादा होती है। मतलब वह **क्वांटम ग्रेविटी** है। इसमें एक मूलकण से सृष्टि बनने का राज अर्थात **बिग बैंग** का राज छिपा हुआ है। जब एक मूलकण के अंदर पूरा तारा समा सकता है तो उससे पूरे तारे का उदय भी तो हो सकता है। वह पुनः-रचना **व्हाइट होल** के माध्यम से हो सकती है। तभी कहते हैं कि ब्लेक होल सृष्टि रचना की फैक्ट्री हो सकता है। हो सकता है कि सृष्टि के अंत में ग्रेविटी हावी होकर पूरे ब्रह्माण्ड या पूरी **सृष्टि** को ही ब्लैक होल बना कर खत्म कर दे। फिर पूरा अंतरिक्ष ही ब्लैक होल अर्थात अव्यक्त आकाश अर्थात अंधकारपूर्ण आकाश अर्थात **मूल प्रकृति** बन जाएगा। हालांकि उसमें पूरी सृष्टि **उच्च दबाव** में समाई होगी। अब ये नहीं पता कि वह किस रूप में उसमें होगी। जब उस परम ब्लैक होल का अंधकाररूप दबाव एक निश्चित मात्रा या समय सीमा को लांघेगा, तब **प्रलय** का अंत हो जाएगा और उसमें दबे अव्यक्त पदार्थ प्रकाशमान तरंगों के रूप में बाहर अर्थात परम व्यक्त अर्थात **परम पुरुष** की ओर प्रस्फुटित होने लगेंगे। इसे ही **प्रकृति और पुरुष** अर्थात **यिन और यांग** के बीच आकर्षण और **सम्भोग** कहा जाता है। इससे शिशु रूप में नई सृष्टि का पुनर्जन्म और विकास होगा। सम्भवतः इसीलिए

शास्त्रों में अनेक स्थानों पर मन के विचारों मुख्यतः **कुण्डलिनी छवि** को भी पुत्र कह कर सम्बोधित किया जाता है। उदाहरण के लिए देव **कार्तिकेय**, **सगर-पुत्र** आदि। स्वाभाविक है कि सृष्टि पहले की तरह ही बनेगी क्योंकि पिछली सृष्टि के दबे पदार्थ ही उसे बना रहे हैं। नई सृष्टि बनने की प्रक्रिया और क्रम भी पुरानी की तरह ही होगा क्योंकि अक्सर देखा जाता है कि जिस क्रम में कोई चीज टूट कर नष्ट होती है, वह लगभग उसी क्रम और प्रक्रिया में आगे से आगे जुड़ते हुए पुनः निर्मित होती है। यह भी हो सकता है कि **बिग क्रन्च** होने की बजाय बिग बैंग ही चलता रहे, जिससे अंत में सभी मूलकण भी एकदूसरे से दूर छिटक कर आकाश में विलीन हो जाएं। पर बनेगा तो तब भी ब्लैक होल जैसा ही। उसमें भी सब कुछ यहाँ तक कि **प्रकाश** भी टूट कर मूल अंतरिक्ष के अँधेरे में गायब हो जाएगा।

आदमी का सूक्ष्म शरीर भी एक ब्लैक होल ही है

आदमी भी तो ऐसे ही मरता है। सारे जीवन भर मानसिक ब्रह्माण्ड का निर्माण करता है। अंत में सब कुछ अँधेरनुमा ब्लैकहोल जैसे अव्यक्त में समा जाता है। आदमी के नए जन्म पर उसके नए **मानसिक ब्रह्माण्ड** का निर्माण इसी मानसिक या **सूक्ष्म ब्लैकहोल** से होता है। मतलब जैसी सूचना उस अँधेरे में दर्ज होती है, नया ब्रह्माण्ड भी वैसा ही बनता है। तभी तो कहते हैं कि आदमी का नया जन्म उसके पुराने जन्मों के अनुसार ही होता है।

ब्लैक होल में प्रकाश तो अनगिनत सितारों जितना समाया हो सकता है, पर वह दबा हुआ या अव्यक्त होता है। यह **मृत्यु** के बाद **जीवात्मा** के सूक्ष्म शरीर अर्थात **प्रेतात्मा** की तरह है। उसमें अनेक जन्मों के जगत का प्रकाश समाहित होता है, पर वह दबा हुआ सा अर्थात अनभिव्यक्त सा होता है। ऐसा लगता है कि वह प्रकाश बाहर उमड़ने को बेताब है।

हरेक जीव एक ब्रह्माण्ड और ब्लैक होल के रूप में जन्म और मृत्यु को प्राप्त होता रहता है

ब्लैक होल का अनुभवात्मक विवरण

मैं पिछली पोस्ट में बता रहा था कि जीवात्मा का **पुनर्जन्म** एक मां के गर्भ में होता है। यह अनेक सम्भावनाओं में से एक है। जीवात्मा **सूर्य-आदि मार्गों** से भी जा सकती है, **चंद्रादि मार्ग** से भी, **स्वर्ग** भी जा सकती है और **नर्क** भी, किसी भी ग्रह या **लोक-परलोक** को जा सकती है, **मुक्त** भी हो सकती है, और **बद्ध** भी रह सकती है। इसका असली अनुभव तो ज्ञानी **ऋषियों** ने ही किया था, जिसका वर्णन उन्होंने **वेद-शास्त्रों** में किया है। हम तो उन्हींके अनुभवों की वैज्ञानिक विवेचना करने की कोशिश करते हैं। मेरा अनुभव तो यही है कि मैंने एकबार अपने मृत परिचित की जीवात्मा को अनुभव किया था। वह ब्लैक होल की तरह थी, मतलब उसमें उस आदमी का पूरा व्यक्तित्व समाया हुआ था, जो उसकी जीवित अवस्था से भी ज्यादा अनुभव हो रहा था, उसके पिछले सभी जन्मों के प्रभाव के साथ, पर फिर भी सबकुछ अंधेरनुमा ही था, हालांकि अंतहीन खुले आसमान की तरह। वैसे ही, जैसे ब्लैक होल में पूरा विश्व समाया होता है। ऐसा लग रहा था जैसे उनका जीवित अवस्था का प्रकाशमान जगत अर्थात उनका **जीवनयात्रा** की शुरुआत से लेकर अब तक का पूरा पिछला व्यक्तित्व किसी दबाव से दबा था, इससे वह अवस्था **कज्जली** या चमकीली काली थी, मतलब चेतना व **सेल्फ अवेयरनेस** अर्थात **आत्मजागरूकता** से भरा अंधेरा था वह, जड़ता या मूढ़ता से भरा नहीं, और शान्तियुक्त आनंद भी था उसमें, हालांकि प्रकाश की कमी से आनंद अधूरा था। ऐसा ही जैसे किसी को सुखचैन तो दो पर अँधेरी कोठरी में बंद रखो। शायद यह एक जानवर जैसा बंधन है जो एक अंधेरे कमरे में बंधा हुआ है, लेकिन अच्छी तरह से खिलाया और पानी पिलाया जाता है, इसलिए **भगवान** को **पशुपति नाथ** या जानवरों का स्वामी कहा जाता है। ऐसा लग रहा था कि वह दबा हुआ **बैकग्राउंड प्रकाश** पूरे जोर व विस्फोट से बाहर

को फैलना चाहता हो अभिव्यक्ति के रूप में। सम्भवतः ब्लैक होल भी ऐसा ही होता है। **इवेंट होरीजन** के साथ देखने पर तो वह वैसा ही लगता है। इवेंट होरीज़ोन को आप आदमी के स्थूल शरीर जैसा या अभिव्यक्त रूप जैसा कह लो, और ब्लैक होल को इसके सूक्ष्म शरीर या दबे रूप जैसा। इवेंट होरीज़ोन में पूरा दृश्य जगत प्रकाशमान और स्थूल होता है, जबकि ब्लैक होल के अंदर वह सूक्ष्मता और अँधेरे में चला जाता है, रहता वहाँ भी पूरा ही है। विचित्र अवस्था होती है सूक्ष्म शरीर की। फिर वो जीवात्मा कई दिन बाद दिव्य जैसी अवस्था में टहलते हुए महसूस हुई। सम्भवतः वह स्वर्ग या मुक्ति की तरफ जा रही थी। मैंने इसका सविस्तार वर्णन एक पुरानी पोस्ट में किया है। मैं इस अनुभव के दौरान तांत्रिक कुण्डलिनी योग का गहन अभ्यास कर रहा था। सम्भवतः इसी ने मुझे उस दिव्य अनुभव के योग्य बनाया था। वह शुभचिंतक प्रेतात्मा थी। इसी तरह एकबार मुझे योगाभ्यास के बीच में ही कुछ अशुभ प्रेतात्माओं के सूक्ष्म शरीरों का अनुभव भी हुआ था। वे हिंसक व गुस्सैल व रक्तपिपासु जैसे लग रहे थे। दरअसल सूक्ष्म शरीर अपनी आत्मा के अंदर या आत्मा के रूप में महसूस होते हैं। वह एक अहसास होता है, जिसके लिए विचारों का घोड़ा दौड़ाने की जरूरत नहीं होती। आपको चीनी की मिठास क्या विचार बताते हैं। नहीं, वह एक अपना अंदरूनी अहसास होता है। उसके साथ पीछे से अच्छे विचार आए, वह अलग बात है। उसी तरह उन **दुष्ट प्रेतों** के अहसास के साथ कुछ हड्डीनुमा, लाल आँखों वाले व बड़े नुकीले दांतों व गुस्से वाले चित्र तो मन में बने, पर वे तो अहसास का पीछा करने वाले विचार होते हैं, अहसास नहीं। सूक्ष्म शरीर तो एक अहसास ही होता है, बिना किसी भौतिक रूपरंग का। **मस्तिष्क एक थिएटर मेन** की तरह होता है, जो अहसास या मूड के अनुसार चित्र बना लेता है। मैंने गुरु स्मरण से उस घटिया अहसास को शांत किया। वह अहसास 10-20 सेकंड जितना ही रहा होगा। उसके एक-दो दिन बाद एक बुरी घटना टलने की खुशखबरी मिली। इसी तरह मैंने बताया था कि किस तरह जीव का जन्म होता है। यह भी मैं शास्त्रों में लिखी बातों को वैज्ञानिक अमलीजामा पहना रहा था, कुछ अपना हल्का अनुभव भी है, हालांकि वह गहरा या निर्णायक अनुभव नहीं है।

एक **उपनिषद** में तो एक जगह यहाँ तक कहा गया है कि जीवात्मा बादलों तक पहुंच कर बारिश के जल में घुलकर जमीन पर आ जाती है, फिर जड़ों से होकर अन्न के पौधे में घुस जाती है। जब कोई आदमी उस अन्न के दाने को खाता है, तो उसके शरीर से होकर उसके वीर्य में पहुंच जाती है। उससे उसकी पत्नि के गर्भ में प्रविष्ट होकर जन्म ले लेती है।

जो भौतिक विज्ञान की पहुंच से परे हो, वहाँ आध्यात्मिक योग-विज्ञान से ही पहुंचा जा सकता है

भौतिक वैज्ञानिक ब्लैक होल के अँधेरे में झाँकने में अस्मर्थ हैं। पर योग विज्ञान इशारा कर रहा है कि उसमें सभी पदार्थ अदृष्य आत्मा अर्थात अदृष्य आसमान के रूप में विद्यमान रहते हैं, जिन्हें आसमान रूप आत्मा के द्वारा सीधा अनुभव तो किया जा सकता है पर भौतिक इन्द्रियों के द्वारा नहीं। जीव का सूक्ष्म शरीर भी वैसा ही होता है।

ब्लैक होल ब्रह्माण्ड-शरीर अर्थात ब्रह्मा का सूक्ष्म शरीर व कारण शरीर है

एलियन हरेक भौतिक पदार्थ के रूप में उपस्थित रहकर हमारे सबसे निकट होते हुए भी सबसे दूर हैं

उपरोक्त तथ्यों से तो यही सिद्ध होता है। देहरहित सूक्ष्मशरीर व कारण शरीर के बीच मुझे कोई ज्यादा अंतर नहीं लगता। दोनों में ही क्वांटम फ्लकचूएशनस आत्मा में **रिकॉर्ड** हो जाती हैं। यही मामुली सा अंतर है कि सूक्ष्मशरीर थोड़े समय के लिए रहता है, क्योंकि उसको स्थूल रूप में प्रकट करने के लिए भौतिक सृष्टि का वजूद होता है, जबकि कारण शरीर लम्बे समय तक बना रहता है, क्योंकि उस समय सृष्टि की प्रलयावस्था होती है, और कहीं कुछ भी भौतिक रूप में नहीं होता। इसके अलावा, कारण शरीर पूरी

तरह से शांत दिखाई देता है क्योंकि इसमें किसी भी क्वांटम लहर की उतार-चढ़ाव को आकर्षक **भूतिया अभिव्यक्ति** के रूप में लंबे समय तक अनुभव नहीं किया जाता है, जैसा कि कभी-कभी सूक्ष्म शरीर के मामले में होता है। इसका मतलब है कि आम जीव की तरह **ब्रह्मा** नाम के जीव का अस्तित्व भी है, जैसा शास्त्रों में कहा गया है। ब्रह्माण्ड ही उसका शरीर है। यह अलग बात है कि वह इससे बद्ध नहीं होता। प्रलय के समय ब्रह्मा की आत्मा में ब्रह्माण्ड रिकॉर्ड हो जाता है। सृष्टि के समय वह फिर अपने पुराने स्थूल रूप में प्रकट हो जाता है। पर शास्त्र कहते हैं कि ब्रह्मा प्रलय के समय अपनी मृत्यु के साथ मुक्त हो जाता है। फिर नई सृष्टि के लिए वो रेकॉर्डिंग कहाँ रहती है। मतलब साफ है कि वह **जीवनमुक्त** हो जाता है, **विदेहमुक्त** नहीं। मतलब उसका शरीर और जन्म-मृत्यु का चक्र बना रहता है, पर मुक्ति के अहसास के साथ। पर जीवनमुक्त तो वह पहले भी था। ऐसा शायद यह दर्शाने के लिए लिखा गया है कि जीव और ब्रह्मा की गति एक जैसी है। ब्रह्मा और जीव में कोई अंतर नहीं। जीवनमुक्त के बारे में जो कुछ भी सोच लो, वह सही ही होता है, क्योंकि वह किसी से प्रभावित ही नहीं होता। यह ऐसे ही है जैसे कुछ अंतरिक्ष वैज्ञानिक अंदेशा जता रहे हैं कि हमें एलियन इसलिए नहीं दिखते क्योंकि वे भौतिक पदार्थों के रूप में ढल गए हैं, और ऐसे बन गए हैं कि वे हर जगह हैं भी और नहीं भी। पूरा ब्रह्माण्ड भी ऐसा ही एक **विशालकाय एलियन** हो सकता है। सम्भवतः इस बात को जानकर ही सभी चीजों को **देवता** मानने की और उनको विभिन्न रूपों में पूजने की परम्परा शुरु हुई थी। ऐसे जीवनमुक्त लोग ही तो होते हैं। फिर शास्त्र कहते हैं कि कोई भी जीव तरक्की करते हुए ब्रह्मा बन सकता है। इसका मतलब मुझे यही लगता है कि ब्रह्मा की तरह पूर्ण जीवनमुक्त बन सकता है, न कि असली ब्रह्मा।

शिव अगर सरोवर है तो शक्ति उसमें हलचल पैदा करने वाला हवा का झोंका है

मान लेते हैं कि सरोवर में जल की हलचल की तरह अंतरिक्ष में क्वांटम फ्लकचूएशनस हमेशा विद्यमान रहती हैं, जिसे हम अव्यक्त कहते हैं। यह भी मान लेते हैं कि **महाप्रलय** के समय अंतरिक्ष एक पूर्ण शांत जल-सरोवर की तरह हो जाता है, जिसमें बिल्कुल भी हलचल नहीं रहती, मतलब क्वांटम फ्लकचूएशनस भी थम जाती हैं। इसे **परम अव्यक्त** भी कह सकते हैं और परम व्यक्त या **परमात्मा** भी। जैसे हवा के झोंके से जल की सतह पर बार-बार उसी किस्म की तरंगों के पैटर्न उसी क्रम में बनते रहते हैं, उसी तरह अंतरिक्ष में भी उसी किस्म की सृष्टि उसी निश्चित क्रम में बारबार बनती रहती है। पर फिर भी अंत में प्रश्न यही बचता है कि प्रलय के अंत में जब सब कुछ शून्य होता है, तब वह **ऊर्जा** या शक्ति कहाँ से आती है, जो उस हलचल को बढ़ा देती है। शून्य में वो हवा का झोंका कहाँ से आता है, जो शुरुआती हलचल को पैदा करता है। बाद में तो यह भी मान सकते हैं कि हलचल से हलचल खुद ही आगे से आगे बढ़ती रहती है। अंतरिक्ष में चलने वाला वह हवा का झोंका ही वह शक्ति है, जिसे शाक्त **सम्प्रदाय** वाले लोग शिव की तरह शाश्वत और अविनाशी मानते हैं। शिव अगर निश्चल अंतरिक्ष है, तो शक्ति उसमें हलचल पैदा करने वाला हवा का झोंका है।

कुण्डलिनी योग ड्यूल नेचर ऑफ़ मैटर से कण प्रकृति को कुंठित करके तरंग प्रकृति को बढ़ाता है

दोस्तों, मैं पिछली पोस्ट में बता रहा था कि **ब्लैक होल** ब्रह्माण्ड का **सूक्ष्म शरीर** होता है। **गेलेक्सी** को आप उसका स्थूल शरीर मान लो, और उसके केंद्र में स्थित ब्लैक होल उसका सूक्ष्म शरीर है। हरेक जीव एक आसमान है, और उसमें एक अलग **ब्रह्माण्ड** है। सब स्वतंत्र हैं और एकदूसरे को नष्ट नहीं कर सकते। हो सकता है कि इसी तरह एक ही आसमान में अनगिनत स्वतंत्र ब्रह्माण्ड भी हों।

आदमी कभी नहीं मरता

ये मैं ही नहीं कह रहा हूँ बल्कि वैज्ञानिक भी इस बात की आशंका जता रहे हैं कि आदमी दरअसल मरता नहीं है, पर मरने के बाद ब्लैक होल में चला जाता है और वहाँ से होकर किसी दूसरे ब्रह्माण्ड में पहुंच जाता है। यह वही बात है जो **शास्त्र** कहते हैं कि आदमी मरने के बाद सूक्ष्म शरीर बन जाता है और नया **जन्म** ले लेता है। नया जन्म नया ब्रह्माण्ड ही है, क्योंकि जितने जीव उतने ब्रह्माण्ड। हरेक जीव एक **अनंत अंतरिक्ष** है, और उसमें विचारों व अनुभवों का समूह ही भरापूरा ब्रह्माण्ड है। रोचक बात यह है कि स्थूल ब्रह्माण्ड की तरह सूक्ष्म मानसिक ब्रह्माण्ड भी अनंत अंतरिक्ष में ही बनता है, **जीव** के शरीर या मस्तिष्क में नहीं, जैसा कि अक्सर माना जाता है। **मस्तिष्क** तो केवल अंतरिक्ष में उन आभासी तरंगों को पैदा करने वाली **मशीन** भर है, जिन्हें वह अंतरिक्ष अपने अंदर महसूस कर सकता है। **योगवासिष्ठ** जैसे शास्त्रों में इसे ऐसे समझाया गया है कि आसमान में लटकते घड़े के अंदर कैद आसमान ही जीव है। वह भ्रम से ही अलग प्रतीत होता है, असलियत में वह एक ही अनंत आसमान से अभिन्न है। घड़े के

अंदर के आसमान में **आभासी तरंगें** बनती रहती हैं, जिनसे जीव **मोहित** हुआ रहता है। मैं पिछली पोस्ट के संदर्भ में बता दूँ कि अनंत आकाश के छोटे से हिस्से में आसक्ति के साथ तरंगों को **आत्म-आकाश** से अलग अनुभव करने से पूरे चमकीले आत्म-आकाश को अपने में अंधेरा महसूस होता है। दरअसल यह **भ्रम** होता है। इससे **मृत्यु** के बाद भी उन तरंगों से बनी **क्वांटम फ्लकचूएशन्स** पर **आसक्ति** बनी रहती है, जिससे वह भ्रमजनित **अंधेरा** बना रहता है, जैसा सम्भवतः मैंने सूक्ष्मशरीर में अनुभव किया था। यह ऐसे ही है, जैसे **क्वांटम फिसिक्स** में मूल तत्त्वों को कण रूप में देखने पर वे अपने तरंग जैसे अनंत रूप को त्याग कर सीमित कणों के रूप में व्यवहार करते हैं। मतलब अनंत ऊर्जा एक **कण** के रूप में सीमित हो जाती है। इसको ऐसे समझ लो कि अनंत अंतरिक्ष की लाइट ऑफ़ हो जाती है, और केवल कणों के रूप में ही सीमित प्रकाश बचा रहता है। अँधेरे आसमान में चमकते हुए कण। जब हम उन्हें अपने असली '**अनंत आसमान की तरंग**' के रूप में देखते हैं, तब वे वैसे ही अंतरिक्ष की तरंग के रूप में व्यवहार करते हैं। मतलब वो तरंग इसीलिए प्रकाशमान है, क्योंकि वह जिस अंतरिक्ष में बनी है, वो खुद प्रकाशमान है। मतलब तरंग के साथ पूरे अनंत अंतरिक्ष की लाइट ऑन रहती है। जल में बनी तरंग तभी रंगीन हो सकती है, अगर वह जल भी रंगीन हो। अगर जल काला हो, तो उससे बनने वाली तरंग रंगीन हो ही नहीं सकती। जबकि तरंग को कण के रूप में मतलब जल से अलग स्वतंत्र रूप में तभी महसूस कर सकते हैं, अगर आधारभूत जल का रंग खत्म कर दिया जाए, पर तरंग का रंग रहने दिया जाए। पर ऐसा संभव नहीं है। इसलिए आधाररूपी तरंग-माध्यम का रंग आभासी रूप में अर्थात झूठमूठ में अर्थात भ्रम पैदा करके गायब करना पड़ता है, **जादूगर** की भ्रम पैदा करने वाली ट्रिक की तरह। इसलिए पदार्थ का असली रूप तरंग होते हुए भी वे **आसक्ति** और **द्वैत** से उत्पन्न भ्रम से कणरूप जान पड़ते हैं। सिंपल सी बात है। मतलब कि **आध्यात्मिक अज्ञान क्वांटम फिसिक्स के अज्ञान पर आधारित** प्रतीत होता है।

कुण्डलिनी योग से एक ही अनंत अंतरिक्ष सभी ब्लैक होलों, ब्रह्माण्डों, और जीवों के रूप में दिखाई देता है

एक जीव मरने के बाद कहाँ गया कुछ पता नहीं चलता। इसी तरह एक **गलेक्सी** ब्लेक होल से निकलकर कौन से ब्रह्माण्ड में गई पता नहीं चलता। जैसे एक ही अनंत अंतरिक्ष में अनगिनत जीवों के रूप में अनगिनत **सूक्ष्म ब्रह्माण्ड** हैं, उसी तरह एक ही अनंत अंतरिक्ष में अनगिनत **स्थूल ब्रह्माण्ड** भी तो हो सकते हैं। अनंत अंतरिक्ष की जितनी मर्जी कॉपीयां निकाल लो। हरेक कॉपी मूल की तरह सम्पूर्ण होती है, डुप्लीकेट नहीं, क्योंकि एक से ज्यादा अनंत अंतरिक्ष संभव ही नहीं। इसी तरह एकमात्र अनुभवरूप अनंत अंतरिक्ष के इलावा किसी की **स्वतंत्र सत्ता** या अस्तित्व ही नहीं है। **लहर**, **कण** आदि जो कुछ भी अनंत आकाश में **आभासी** रूप में महसूस होता है, वह अपने आधार **अनंत-आकाश** के साथ ही सत्तावान महसूस होता है, स्वतंत्र रूप से नहीं। या ऐसा कह लो कि अनंत अंतरिक्ष को वह अपनी आभासी लहरों के रूप में अपने में ही महसूस होता है। अगर उन आभासी कलाकृतियों का अपना स्वतंत्र अस्तित्व होता, तब तो हरेक **जड़ वस्तु** जैसे कि कुर्सी, पत्थर, चित्र, मूर्ति आदि जीवित होती, जैसा कि कई **एनिमेशन फिल्मों** में दिखाया जाता है। जगत, विचार आदि तो उस आकाश-आत्मा में आभासी तरंगें हैं, जो दरअसल हैं ही नहीं। इसलिए एक ही चारा बचता है कि एक ही अनंत अंतरिक्ष को ही सभी जीवों और ब्रह्माण्डों के रूप में दिखाया जाए। यह शास्त्रों में एक **श्लोक** के द्वारा समझाया गया है, "**ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदम पूर्णात पूर्णमुदुच्यते, पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते**"। इसका मतलब है कि 'वह' मतलब ॐ नाम वाला परम तत्त्व पूर्ण है, मतलब अनंत अंतरिक्षरूप है, 'यह' मतलब जीव भी अनंत अंतरिक्ष है, 'उस' अनंत अंतरिक्ष से 'इस' अनंत अंतरिक्ष के निकल जाने के बाद भी 'वह' अनंत अंतरिक्ष ही बचा रहता है, उसमें कोई कमी नहीं आती। शून्यरूप अनंत अंतरिक्ष से कोई कुछ निकाल

ही कैसे सकता है। क्योंकि सभी अनंत अंतरिक्ष एक ही हैं, इसलिए सभी जीव भी एक ही हैं। जैसे भिन्न-भिन्न स्थानों पर स्थित जीवों के मानसिक ब्रह्माण्ड '**एक अंतरिक्ष रूप**' ही हैं, उसी तरह भिन्नभिन्न स्थानों पर स्थित स्थूल ब्रह्माण्ड एक ही अंतरिक्ष में दिखते हुए भी, अलग-अलग स्वतंत्र सत्ता रखते हुए भी, अलग-अलग स्थानीय रूप रखते हुए भी, अलग-अलग अनंत अंतरिक्ष की सत्ता साथ में समेटे हुए हैं। इससे **मल्टीवर्स** की बात खुद ही सिद्ध हो जाती है। जैसे जीवों के रूप में सूक्ष्म ब्रह्माण्ड अनगिनत हैं, वैसे ही स्थूल ब्रह्माण्ड भी अनगिनत हैं। हालांकि सबके साथ अपना अनंत अंतरिक्ष है, इसलिए सब एक अनंत अंतरिक्ष रूप ही हैं, और कभी उसमें जाके मिल जाएंगे। वैसे तो हमेशा मिले हुए ही हैं पर **वर्चुअली** मिलते दिखेंगे। इस तरह से जैसे जीव के रूप में सूक्ष्म ब्रह्माण्ड की **मुक्ति** होती है, उसी तरह स्थूल ब्रह्माण्ड के रूप में भी जरूर होती होगी। यह अलग बात है कि स्थूल ब्रह्माण्ड का **अभिमानी आत्मा** अर्थात ब्रह्मा पहले से ही **अनासक्त**, **अद्वैतपूर्ण** और **जीवनमुक्त** है, जैसा शास्त्रों में कहा गया है। शास्त्र खुद मल्टीवर्स को मानते हैं। वे कहते हैं कि अनगिनत जीवों की तरह **ब्रह्मा** भी अनगिनत हैं। सम्भवतः उनका कहना है कि हरेक जीव विकास के उत्तरोत्तर क्रम को लाँघते हुए **जीवनयात्रा** के अंतिम पड़ाव के निकट ब्रह्मा भी जरूर बनता है। इसी संदर्भ में गीता में आता है कि **आत्मा** न तो कभी पैदा होती है, और न नष्ट होती है। मतलब कि आदमी कभी नहीं मरता। यही तो उपरोक्त वैज्ञानिक तथ्यों से भी सिद्ध हो रहा है कि अनंत व शून्य आकाश को न तो बनाया जा सकता है, और न ही नष्ट किया जा सकता है। हाँ यह जरूर है कि जीव-आत्मा रूपी **भ्रमित अनंताकाश** कुण्डलिनी योग से अपने अज्ञानरूपी आभासी भ्रम को दूर करके **ओरिजनल अनंताकाश** अर्थात **परमात्मा** के साथ एकाकार हो सकता है। एकाकार पहले से ही है, बस **आभासी भ्रम** का बादल हटाना है।

कुण्डलिनी जागरण बनाम सूक्ष्मशरीर-समाधि

दोस्तो, मैं पिछली कुछ पोस्टों में **ब्लैकहोल** व **सूक्ष्मशरीर** जैसे अनुभव के बारे में बात कर रहा था। थोड़ा उसका और गहराई से **अध्यात्मवैज्ञानिक** विश्लेषण करते हैं। मुझे लगता है कि जो चीज अनंत व शून्य अंतरिक्षरूपी आत्मा से अलग भौतिक रूप में है, चाहे कितने ही छोटे कण के रूप में है, उसे हम आत्मरूप से अनुभव नहीं कर सकते। आत्मा से आत्मा ही जुड़ सकती है, अन्य कुछ नहीं। वैसे तो आत्मा की आभासी लहर भी जुड़ सकती है, कण तो बिल्कुल नहीं। वैसे तो लहर भी नहीँ जुड़ती, केवल जुड़ी हुई दिखती है। वह असली नहीँ बल्कि आभासी होती है, जैसे बंद आँखों को खोलते हुए पलकों के बालों से **आसमान में बुलबुले** जैसे दिखाई देते हैं। दरअसल आसमान में कोई बुलबुले नहीँ होते। यह उदाहरण मैंने **योगवासिष्ठ ग्रंथ** से लिया है। कण द्वैत का प्रतीक है। वह आत्म-आकाश से अलग है, **आकाश-पुष्प** या **आकाश-उद्यान** की तरह, जैसा शास्त्र कहते हैं। आकाश में बिना किसी आधार के यकायक फूल नहीँ खिल सकता। अगर हम योग समाधि से **कुण्डलिनी छवि** को आत्मरूप में महसूस करें तो वह अपनी आत्मा से अभिन्न उसमें तरंग रूप से अनुभव होगी, किसी पृथक भौतिक वस्तु या **कण** के रूप में नहीं। जो मुझे सूक्ष्म शरीर आत्मरूप में अनुभव हुआ वह **तरंगरूप** नहीं था। मतलब वह वैसा नहीं था जैसी सभी भौतिक चीजें मन के विचारों के रूप में लहरदार होती हैं। मतलब उनकी सत्ता या चमक घटती-बढ़ती रहती है। वह सूक्ष्मशरीर तो एकसमान **कज्जली चमक** वाला अंधेरा था। फिर उसके बारे में मुझे पूरा ब्यौरा कैसे महसूस हो रहा था, उससे भी ज्यादा जितना भौतिक रूपों से मिलता है। इसका मतलब है कि उसमें सूक्ष्म तरंगें थीं, जिनका अहसास नहीं हो रहा था, पर उनमें दर्ज सभी सूचनाओं का पूरा अहसास हो रहा था। ये तरंगें **क्वांटम फ्लैकचूएशन** या हलचल के रूप में हो सकती हैं, जिन्हें शरीर के बिना ऊर्जा नहीं मिल रही थीं, जिससे वे स्थूल तरंगों के रूप में व्यक्त नहीं हो पा रही थीं। वे सूक्ष्म तरंगें भी स्थूल तरंगों की तरह ही थीं। इसे हम ऐसे समझ सकते हैं कि जैसे यदि पानी के तलाब में एक पत्थर

फ़ेंकने की ऊर्जा से थोड़ी देर के लिए स्थूल तरंगें बनती हैं, तब पत्थर से मिली ऊर्जा खत्म होने के बाद भी बड़ी देर तक उसी पैटर्न की सूक्ष्म तरंगें बनती रहती हैं। ऐसा इसलिए क्योंकि तरंगें **पेंडुलम** की तरह व्यवहार करती हैं, मतलब अपनी ही अंतरंग ऊर्जा से उठती गिरती रहती हैं। फिर तो मरने के बाद आदमी के सूक्ष्मशरीर के कंपन लगातार घटते रहने चाहिए और अंततः वह कंपनरहित **चिदाकाश** अर्थात **परमात्मा** बन जाना चाहिए अर्थात आदमी खुद ही **मुक्त** हो जाना चाहिए। कई जगह **शास्त्र** भी इस ओर इशारा करते हैं कि ऐसा होता है, हालांकि ऐसा स्पष्ट नहीं कहा है, पर जिसको ज्ञान न हो या जिसने **आसक्ति** और **द्वैत** से भरा जीवन जिया हो, वह उस **अँधेरे** से घबराकर या उससे ऊब कर जल्दी ही अपने लिए नया शरीर चुन लेता है, और शरीर उसे अपने **कंपन** के अनुसार ही अच्छा या बुरा मिलता है। इसका यह मतलब भी है कि इसी तरह ब्लैकहोल की सूक्ष्म तरंगें भी समय के साथ शांत हो जाती हैं, और वह **निश्चल समुद्र** जैसे अनंत व शून्य **अंतरिक्ष** से पूरी तरह एक हो जाता है। हालांकि इसमें करोड़ों साल लग सकते हैं, क्योंकि वह पानी का नहीं बल्कि शून्य अंतरिक्ष का कंपन है। पर शास्त्र यह भी स्पष्ट रूप से कहते हैं कि **मोक्ष** अपनेआप नहीं मिलता। करोड़ों-अरबों वर्षों तक जारी रहने वाले **प्रलयकाल** में भी **कारण शरीर** से आत्मा का बंधन बना रहता है। मुझे तो लगता है कि दोनों ही बातें सही हैं, समय और परिस्थिति के अनुसार, हालांकि दूसरी बात ज्यादातर मामलों में फिट बैठती होगी।

कुण्डलिनी चित्र का हम बारबार **ध्यान** करते हैं, इससे वह **समाधि** अर्थात **कुण्डलिनी जागरण** के रूप में आत्मा से एकाकार हो जाता है। मतलब किसी भी चीज के बारे में ध्यान करके उसको जगा कर हम उसके बारे में पूरी तरह से सबकुछ जान जाते हैं, जैसा कि शास्त्र कहते हैं। योगवासिष्ठ में कहा गया है कि वायु से **योगसमाधि** से जुड़ने पर वायु की सभी शक्तियाँ मिलती हैं, जैसे आसमान में उड़ना, अदृष्य होना आदि। इसी तरह अन्य पदार्थों जैसे अग्नि, जल आदि से जुड़ने से उन-उन पदार्थों का संपूर्ण व प्रत्यक्ष ज्ञान होने से उनकी सभी शक्तियां मिलती हैं। सम्भवतः इन्हें **पंचभूत समाधि** भी कहते हैं। अब इनका **वैज्ञानिक विश्लेषण** तो मैं इस

समय नहीँ कर सकता। पर किसी के या अपने ही सूक्ष्म शरीर को जगाने के लिए हम किसका ध्यान करेंगे। सूक्ष्मशरीर का ही करेंगे। यह नहीं पता कैसे। सम्भवतः ऐसे ही जैसे **भूत** का किया जाता है। **गीता** में कहा गया है कि देव को पूजने वाले **देवता** बनते हैं, और भूत को पूजने वाले भूत। तो स्वाभाविक है कि सूक्ष्म शरीर का ध्यान करने वाला सूक्ष्मशरीर ही बनेगा। क्योंकि सूक्ष्मशरीर में अँधेरे का राज है, इसलिए अंधेरा व शक्ति पैदा करने वाले **मांसमदिरा** व **संभोग** जैसे **पंचमकारों** के साथ **तांत्रिक कुण्डलिनी योग** से भूत या सूक्ष्मशरीर का आत्मरूप में अनुभव होता है, ऐसा मुझे लगता है। **प्रेतात्माएं** लोगों से सम्पर्क करके मदद लेना और देना चाहती हैं, पर इसके लिए आदमी में प्रेतात्मा की उच्च दबाव वाली **ऊर्जा** का आवेश झेलने की शक्ति होना जरूरी है, जो केवल समर्पित तांत्रिक कुण्डलिनी योग से ही संभव प्रतीत होता है। कुण्डलिनी चित्र यदि उस विशेष भूत या सूक्ष्मशरीर से संबंधित हो तो ध्यान ज्यादा जल्दी सफल और प्रभावशाली हो जाता है। पर ऐसा कैसे होता है, उसके लिए थोड़ा गहराई से विश्लेषण करना होगा।

मुझे एक नई **अंतर्दृष्टि** मिली है। उपरोक्त समाधि का अनुभव कुण्डलिनी जागरण की तरह नहीं था। मतलब उस अनुभव में मैं परमात्मा से एकाकार नहीं हुआ, बल्कि एक अन्य जीवात्मा से एकाकार हुआ। अगर मैं परमात्मा से एकाकार हुआ होता, तो कुण्डलिनी जागरण की तरह **अनंत प्रकाश, आकाश व आनंद** से कुछ क्षणों के लिए सम्पन्न हो जाता। साथ में मन-मस्तिष्क में सुहाने विचार, सागर में तरंगों की तरह उमड़ते, जैसा कि मैंने पिछली एक पोस्ट में लिखा है कि मस्तिष्क एक **थिएटर मेन** की तरफ काम करता है, जो मूड के अनुसार दृश्य प्रस्तुत कर देता है। हालांकि कुछ क्षणों के सूक्ष्मशरीर के अनुभव के बाद **मस्तिष्क** उससे संबंधित विचार बनाने लगा, जैसे उनकी **मृत्यु** से दुखी लोग आदि। हालांकि ये अनुभव सागर में तरंग की तरह महसूस नहीं हो रहे थे, क्योंकि मुझे उस **परमात्म-सागर** का अनुभव नहीँ हो रहा था, जिसमें सभी कुछ तरंगों के रूप में है। विचारों के उठने के साथ ही शुद्ध अनुभव खत्म होने लगता है। विचार एक **शोर** जैसा या **भ्रम** जैसा पैदा करते हैं। योगी को ऐसे दिव्य अनुभव इसीलिए ज्यादा होते हैं, क्योंकि वे

ज्यादा देर तक **निर्विचार** बने रह सकते हैं। होते सभी को हैं, पर वे विचारों के शोर के कारण इतने कम समय के लिए रहते हैं कि पहचान में ही नहीँ आते। जैसा **ओशो महाराज** कहते हैं कि **सम्भोग** के दौरान **वीर्यपात** के अनुभव के कुछ क्षणों के दौरान सभी को समाधि का अनुभव होता है, पर वह इतने कम समय के लिए रहता है कि उसका पता ही नहीं चलता। इसलिए वे **ध्यानयोग** के माध्यम से उस समय को बढ़ाने को कहते हैं। कहते हैं कि **जानवरों** को निकट भविष्य का अंदाजा लग जाता है, क्योंकि वे आदमी से ज्यादा निर्विचार होते हैं, हालांकि अलग अर्थात अज्ञान वाले तरीके से। मेरे इस उपरोक्त अनुभव को एकाकार भी नहीँ कह सकते, क्योंकि **एकाकार** तो परमात्मा के साथ ही हुआ जा सकता है। इसे ऐसे कह सकते हैं कि मैं कुछ क्षणों के लिए अपने आत्मरूप को छोड़कर सूक्ष्मशरीर बन गया। यह ऐसे था कि एक ही सूक्ष्मशरीर था, पर उसे एकसाथ अनुभव करने वाली दो आत्माएं थीं। असली या **होस्ट आत्मा** उन दिवंगत परिचित की थी। नकली या **अतिथि या घुसपैठिया आत्मा** मेरी थी। सूक्ष्मशरीर से ऐसे ही सम्पर्क किया जा सकता है। भला अँधेरे व शून्य आसमान को जानने का और क्या तरीका हो सकता है। उनकी समस्या या उनका प्रश्न जानने के लिए मैं उनके सूक्ष्मशरीर से जुड़ गया। उनकी बात कानों से नहीँ सुनाई दे रही थी, पर सीधी आत्मा में महसूस हो रही थी। न उनका शरीर, न मुख और न ही शब्द। फिर भी उनके बारे में सबकुछ जान पा रहा था और उनकी हरेक बात सुन पा रहा था। मैंने उनके सूक्ष्मशरीर में रहकर उन्हींको जवाब भी दिया, जिसे उन्होंने ध्यान से सुना, पर वैसे ही आत्म-भाषा में। फिर सम्भवतः जब मैं अपना जागृति से संबंधित अनुभव याद करने के लिए अपने सूक्ष्मशरीर में आने लगा, तब मेरे मस्तिष्क में विचारों का शोर बढ़ने लगा, जिससे सम्पर्क टूट गया। पर मुख्य बात मैंने बता दी थी। शायद **मकानमालिक** ने घुसपैठिये को किक मारके भगा दिया था। हाहाहा। हो सकता है बहुत से कारण रहे हो पर सबसे मुख्य वजह यह डर लगता है कि कहीं मैं उनके सूक्ष्मशरीर में हमेशा के लिए कैद न हो जाऊं, और मेरे सूक्ष्मशरीर को खाली जानकर उनकी आत्मा उसपर कब्जा न कर लें। भाई पहले अपना घर बचाना था, न कि किसी की मदद करनी थी।

वैसे भी अधिकांश मामलों में कोई दूसरे के सूक्ष्मशरीर में ज्यादा देर नहीँ ठहर सकता, जैसे कोई अतिथि बनकर किसीके घर पर कब्जा नहीँ कर सकता। सम्भवतः **परकायाप्रवेश सिद्धि** इसीका उत्कृष्ट रूप हो, जिसमें सूक्ष्मशरीर के मालिक आत्मा को भगाकर अतिथि आत्मा स्थायी तौर पर बस जाती है। कहते हैं कि **आदि शंकराचार्य** इसमें पारंगत थे। शास्त्रों में एक कथा आती है, जिसमें राजकुमार **पुरु** ने अपने वृद्ध पिता और **राजा ययाति** को अपनी जवानी दान दे दी थी। यह तभी हो सकता है, जब उन्होंने अपने सूक्ष्मशरीर एकदूसरे के साथ बदल दिए हों। मैंने बचपन में एक तथाकथित सत्य घटना का वर्णन पढ़ा-सुना था, जिसके अनुसार एक अंग्रेज अधिकारी कहता है कि उसने एक वृद्ध योगी बाबा को झाड़ियों के बीच में से एक नौजवान की लाश घसीटते देखा। कुछ देर के बाद वह नौजवान जिन्दा होकर किश्ती में सवार होकर नदी पार कर रहा था। मतलब साफ है कि योगी ने अपने शरीर सूक्ष्म को अपने बूढ़े शरीर से बाहर निकालकर नौजवान के मृत शरीर में प्रविष्ट करा दिया था ताकि वह लम्बे समय तक और योग कर पाता। अब पता नहीँ यह सच है कि ढोंग है कि जब किसी के शरीर में बाहरी प्रेतात्मा का कब्जा हो जाता है, जिससे उस आदमी का मन व शरीर उसके कब्जे में आ जाता है। इसे तंत्र-मंत्र आदि से ठीक करवा दिया जाता है। कुछ तो बात जरूर है, जिसे **आध्यात्मिक विज्ञान** ही ज्यादा अच्छे से समझ सकता है, भौतिक विज्ञान नहीं।

कुंडलिनी जागरण ब्लैक होल विज़ुअलाइज़ेशन से अलग है

दोस्तों, पिछली पोस्ट लंबी हो रही थी इसलिए विषय को वहीं रोकना पड़ा था। अब इस पोस्ट में उसे जारी रखते हैं। जब सभी लोगों के अनुभव एक ही **अनंत अंतरिक्ष** के अंदर हो रहे हैं, तब कोई भी आदमी किसी भी दूसरे आदमी के अनुभव से जुड़ सकता है। मेरे बोलने का मतलब है कि मैं भी हरेक जीव की तरह अनंत अंतरिक्ष रूप हूँ। मैं **प्रेमयोगी वज्र** नाम के आदमी के मस्तिष्क में बने **सूक्ष्म शरीर** से जुड़ा हुआ हूँ। फिर मैं अपने दोस्तों, रामू और श्यामू के मस्तिष्क में बने सूक्ष्म शरीर के साथ क्यों नहीँ जुड़ सकता। जैसा मेरा अपना असली रूप अनंत अंतरिक्ष है, उसी तरह रामू और शामू का असली रूप भी वही अनंत अंतरिक्ष है। एक ही अनंत अंतरिक्ष तीन अलग-अलग सूक्ष्म शरीरों के साथ जुड़ा है। उससे मेरा अनंत अंतरिक्ष रूप अलग अनुभव वाला हो गया, उनका अलग अनुभव वाला हो गया। मतलब एक ही अनंत अंतरिक्ष हम तीनों लोगों के रूप में अलग-अलग प्रतीत होने लगा, हालांकि है एक ही। सम्भवतः मैं अपने पूर्वोक्त परिचित के सूक्ष्मशरीर से कुछ क्षणों के लिए जुड़ गया था। यह कोई चमत्कार नहीं बल्कि आध्यात्मिक मनोविज्ञान है। एक बद्ध आदमी जिस समय जैसा अनुभव कर रहा होता है, उस समय वह वैसा ही बना होता है। इसलिए उस सूक्ष्म शरीर को अनुभव करते समय मैं वही सूक्ष्मशरीर बन गया था। इसके विपरीत कुण्डलिनी जागरण के अनुभव के दौरान आदमी पूर्ण **मुक्त** अवस्था में होता है। उस समय वह अपने असली अनंत **चेतन-अंतरिक्ष** में स्थित होता है। उस समय उसके सभी अनुभव, चाहे वे स्थूल शरीर से संबंधित हो या सूक्ष्मशरीर से, अपने में **तरंग** रूप में अर्थात मिथ्या होते हैं। वे उसे महसूस होते हुए भी महसूस नहीँ होते। जागृति का कुछ क्षणों का अनुभव खत्म होते ही जैसे उस **चिन्मय अनंत आकाश** की चेतना की रौशनी बुझ जाती है, और वह फिर से पहले की तरह **अंधेर अनंत आकाश** ही महसूस होता है। उस अँधेरे के रूप

में उस आदमी का सूक्ष्म शरीर दर्ज होता है। तो यह क्यों न समझा जाए कि सूक्ष्म शरीर किसी भी **क्वांटम हलचल** के रूप में नहीँ अपितु **आत्म-आकाश** की रौशनी को ढकने वाले अँधेरे के रूप में रहता है। मैं ऐसा इसलिए कह रहा हूँ क्योंकि जिस परिचित के सूक्ष्म शरीर को मैंने अनुभव किया, उनकी **मृत्यु** हो चुकी थी इसलिए उनके पास अपना शरीर नहीं था। **जीवात्मा** शरीर के बाहर किसी भी हलचल से जुड़कर उसे महसूस नहीँ कर सकती। अगर ऐसा होता तब तो शरीर के बाहर अनगिनत तरंगों के रूप में अनगिनत हलचलें होती रहती हैं। फिर तो हरेक **विद्युत्चुंबकीय तरंग** जिन्दा होती। यहाँ तक कि मिट्टी, पत्थर, कुर्सी आदि सभी कुछ जिन्दा और जीवात्मा से युक्त होता, पर ऐसा नहीँ है। इसका मतलब है कि **जीवनयात्रा** की शुरुवात से लेकर आदमी के जीवन का अनेक जन्मों का पूरा ब्यौरा उसके अनंत आत्म-आकाश में अनुभव होने वाले **अँधेरे की विशेष किस्म व मात्रा** के रूप में दर्ज रहता है। उसे ही सूक्ष्मशरीर कहते हैं। अब इसको **ब्लैक होल** पर लेते हैं। ऐसा समझ लो कि आदमी की मृत्यु की तरह **तारा** पूरी तरह से नष्ट हो जाता है। मतलब वह भौतिक रूप में कुछ भी नहीं बचा रहता। यह मैं ही नहीँ बोल रहा हूँ। **आइंस्टीन** ने भी जटिल गणितीय गणना से सिद्ध करके बताया है कि ब्लैकहोल **सिंगुलेरिटी** तक कंम्प्रेस हो जाता है। यह अलग बात है कि ज्यादातर वैज्ञानिक सबसे छोटे अकेले कण को सिंगुलेरिटी समझ रहे हैं, पर मैं एक कदम नीचे शून्य आकाश तक जा रहा हूँ। बेशक वह सबसे बड़ा लगता है, पर सबसे छोटा भी वही है। मतलब कि ब्लैकहोल सूक्ष्म शरीर की तरह एक अँधेरे से भरा आसमान बन जाता है। बेशक उसे अनुभव करने वाला कोई नहीँ होता, क्योंकि जब तारे की जिन्दा अवस्था में उसमें जीवात्मा की तरह कोई विशेष आत्मा नहीँ बंधी थी, तब उसकी मृत्यु के बाद उससे कैसे बंध सकती है। आत्मा के बंधन की मशीन केवल **हाड़मान्स का बना शरीर** ही है। जब कोई अनुभव करने वाला ही नहीँ, तब अँधेरे आसमान का क्या औचित्य है। हम ऐसा भी नहीँ कह सकते। अगर ऐसा है तब मिट्टी, पत्थर जैसी वस्तुओं के रूप में अनगिनत तरंगों का भी क्या औचित्य है, जब वे स्वयं अनुभवरूप नहीँ हैं, मतलब स्वयं को अनुभव नहीँ कर सकतीं। जिस

तरह **चिदाकाश** अपने में स्थित इन वस्तुओं को अनुभव नहीँ कर सकता, उसी तरह इनके नष्ट होने से बने अपने आभासी अँधेरे को भी अनुभव नहीँ कर सकता। वह आभासी अंधेरा ही **डार्क मैटर** और **डार्क ऐनर्जी** है। आदमी के मरने के बाद बहुत से लोग दुःख के कारण उसकी तरफ खिंचे चले जाते हैं। सम्भवतः शुरु की प्रेतात्मा डार्क मैटर ही होती है। ब्लैक होल भी शुरु में डार्क मैटर ही होता है, इसीलिए अपने मजबूत **गुरुत्वाकर्षण** से सभी को अपनी तरफ खींचता है। कुछ समय बाद **प्रेतात्मा** को सभी भूल जाते हैं, और उससे नफ़रत सी करते हुए सभी अपने-अपने कामों में पहले की तरह लग जाते हैं। मतलब प्रेतात्मा सभी को अपने से दूर धकेलती है। सम्भवतः उस समय प्रेतात्मा डार्क एनर्जी बनी होती है, क्योंकि उसमें भी दूर सबको धकेलने का बल होता है। सम्भवतः इसी तरह समय के साथ ब्लैक होल का डार्क मैटर भी अनंत आकाश में समाकर डार्क एनर्जी बन जाता है। यह तो विज्ञान ने भी सिद्ध कर दिया है कि ब्लैकहोल भी लगातार सूक्ष्म रेडिएशन छोड़ते रहते हैं जिसे **हाव्किंस रेडिएशन** कहते हैं, और इस तरह से बहुत लम्बे समय बाद खत्म हो जाते हैं। डार्क एनर्जी के रूप में फिर यह अन्य पिंडों को खींचने का नहीँ बल्कि धकेलने का काम करता है। दिवंगत आदमी के अँधेरे अनंत अंतरिक्ष रूपी सूक्ष्मशरीर में दर्ज सूचना क्या पता कौन से **ब्रह्माण्ड** में जन्मे आदमी के अंदर अभिव्यक्त होए, कोई कह नहीँ सकता। अनंत अंतरिक्ष के किसी भी कोने में उस आदमी का पुनर्जन्म हो सकता है। इसी तरह नष्ट हुए तारे के अँधेरे अनंत अंतरिक्ष रूपी ब्लैकहोल नामक सूक्ष्मशरीर में दर्ज सूचना क्या पता किस ब्रह्माण्ड में जाकर नए तारे के जन्म के रूप में अभिव्यक्त हो जाए, कुछ कह नहीं सकते। इसी सिद्धांत के अंदर **व्हाइट होल** और **टेलीपोर्टेशन** छुपा हुआ है। इससे **विज्ञान** का वह सिद्धांत भी क़ायम रहता है कि **क्वांटम इनफार्मेशन** कभी नष्ट नहीँ होती। तारे से इनफार्मेशन डार्क मैटर में चली गई, डार्क मैटर से डार्क एनर्जी में चली गई, और डार्क एनर्जी से फिर तारे में आ गई। इस तरह यह चक्र आदमी के **जन्ममरण** की तरह चलता रहता है। कई लोग कहेंगे कि प्रेतात्मा ब्लैक होल की तरह घेरा बना कर तो नहीँ रहती। हाहा। भाई यह **अध्यात्म विज्ञान** है। इसमें **भौतिक**

विज्ञान की तरह एक जमा एक दो नहीँ कर सकते। समानता दिखा सकते हैं। आदमी के मरने के बाद कुछ समय उसकी आत्मा ब्लैक होल की तरह **लोकेलाइज** रहती है। उसे भटकी हुई आत्मा कहते हैं। कई लोगों को इसका अहसास होता है। फिर वह डार्क एनर्जी की तरह अनंत अंतरिक्ष में समा जाती है। विभिन्न **धर्मों** में विभिन्न **आध्यात्मिक कृत्य** इसीलिए किए जाते हैं, ताकि जल्दी से जल्दी उसकी गति लग सके और वह अनंत अंतरिक्ष में समा कर नया जन्म ले सके।

उपरोक्त वैज्ञानिक विवरण से यह बात स्पष्ट होती है कि पुराने लोगों को **वर्महोल**, व्हाइट होल और टेलीपोर्टेशन आदि का पता था, हालांकि अपने तरीके से। उन्हें पता था कि स्थूल शरीर के साथ यह संभव नहीं है, पर सूक्ष्मशरीर के साथ संभव है। इसलिए वे अच्छे **कर्मों** से अपने सूक्ष्मशरीर को ज्यादा से ज्यादा अच्छा बनाते थे, ताकि वह उन्हें अच्छे **ग्रह**, सितारे या ब्रह्माण्ड में ले जा सके, क्योंकि उन्हें यह भी पता था कि क्वांटम इनफार्मेशन कभी नष्ट नहीं होती।

कुण्डलिनी शक्ति अशुभ व भूतिया घटनाओं से रक्षा करती है

दोस्तों, मैं पिछली पोस्ट में बता रहा था कि पुराने लोगों को **वर्महोल, व्हाइट होल और टेलीपोर्टेशन** आदि का पता था, हालांकि अपने तरीके से। उन्हें पता था कि स्थूल शरीर के साथ यह संभव नहीं है, पर **सूक्ष्मशरीर** के साथ संभव है। इसलिए वे अच्छे कर्मों से अपने सूक्ष्मशरीर को ज्यादा से ज्यादा अच्छा बनाते थे, ताकि वह उन्हें अच्छे **ग्रह, सितारे या ब्रह्माण्ड** में ले जा सके, क्योंकि उन्हें यह भी पता था कि **क्वांटम इनफार्मेशन** कभी नष्ट नहीं होती। इसी वजह से हम देखते हैं कि आजकल के बच्चे जन्म से ही **हाइटेक** होते हैं। वे **स्मार्टफोन** के बिना खाना भी नहीं खाते। दरअसल उनके हाल ही के पिछले जन्म की हाइटेक सूचना उनके सूक्ष्मशरीर में दर्ज हुई होती है। रही बात शरीर के साथ व्हाइट होल से गुजरना या टेलीपोर्टेशन करना, मुझे तो यह संभव लगता नहीँ है। चलो मान लेते हैं कि किसी चमत्कारिक शक्ति से यह संभव हो गया। फिर भी जाएंगे कहाँ क्योंकि अभी तक कोई भी पूरी तरह से **हेबिटेबल** अर्थात जीवन के अनुकूल ग्रह नहीँ मिला है। कोई **मंगल** पर जाने की योजना बना रहा है, कोई **चाँद** पर। वहाँ बाद में जाएं, पहले ऊँचे **हिमालय** में जाकर देख लो। तापमान की एक डिग्री की कमी भी कम्पकम्पी दे सकती है और जीवन को जोखिम में डाल सकती है। दूसरे ग्रह पर बाद में जाना, क्योंकि वहाँ तो ऐसी अनगिनत समस्याएं होंगी, वे भी विकराल रूप में। धरती पर ही ऐसे बहुत से स्थान हैं, जिन्हें विज्ञान हेबिटेबल नहीँ बना पा रहा है, अन्य ग्रहों की तो दूर की बात है। उमंग और जोश बनाए रखने में कोई बुराई नहीं है।

वैज्ञानिक अंदेशा जता रहे हैं कि **ब्लैक होल** में छुपे पदार्थ किसी अन्य आयाम में छिपे ब्रह्माण्ड में जा सकते हैं। अंतरिक्ष के अनगिनत आयाम मतलब अनगिनत कॉपीयां हो सकती हैं, जैसा अभी हाल की एक पिछली पोस्ट में बताया गया है। अब पता नहीं कौन सी कॉपी में जाकर वे पुनः भौतिक रूप

में जन्म ले लेते हैं। यह ऐसे ही है जैसे आदमी मरने के बाद पता नहीं कौन सी कॉपी में चला जाता है। हम जीव दूसरी कॉपी मतलब दूसरे जीव में स्थित ब्रह्माण्ड को बिल्कुल भी अनुभव नहीं कर सकते। हालांकि हम दूसरे जीव के शरीर को तो अनुभव कर ही सकते हैं। इसी तरह हम बाहरी अर्थात स्थूल रूप में तो दूसरे ब्रह्माण्ड को जान ही सकते हैं। पर दूसरे ब्रह्माण्ड हमारी पहुंच से परे हैं। यह ऐसे ही है जैसे नार्थ पोल पर बैठा व्यक्ति साऊथ पोल पर बैठे व्यक्ति को नहीं देख सकता।

अब तो यह प्रमाण भी मिला है कि ब्लैक होल में सभी पदार्थ बहुत ज्यादा विस्फोटक दबाव में दबे होते हैं। वे सम्भवतः विस्फोट के साथ बाहर निकलना चाहते हों, क्योंकि कोई भी वस्तु हो या व्यक्ति, दबाव में रहना पसंद नहीं करते। हवा, पानी आदि चीजें उच्च दबाव के क्षेत्र से निम्न दाब क्षेत्र की तरफ भागते हैं। काम के बेवजह दबाव की वजह से हर साल हजारों-लाखों कर्मचारी अपनी कम्पनियाँ बदलते हैं, अन्यथा बीमार पड़ जाते हैं। पर ब्लैक होल के वे दबे पदार्थ ब्लैकहोल के **गुरुत्व** बल को भगाकर बाहर नहीं भाग पाते। यह ऐसे ही है जैसा मैं हाल की एक पिछली पोस्ट में सूक्ष्मशरीर रूपी **प्रेतात्मा** के बारे में बता रहा था। हालांकि कुछेक मामलों में ब्लैक होलों को थोड़े-बहुत पदार्थ उगलते हुए देखा गया है। इसी तरह प्रेतात्मा भी विरले मामलों में डरावने रूप बनाकर लोगों को डरा सकते हैं। इन्हें **भटकी हुई आत्माएं** कहते हैं। ये उनके साथ ज्यादा होता है, जो **अकाल मृत्यु** से मरते हैं। अकालमृत्यु मतलब पूरी दुनियावी **मायामोह** में डूबे आदमी की अचानक मृत्यु। दुनिया के प्रति **आसक्ति और द्वैत** भाव वाले आदमी के साथ भी ऐसा हो सकता है। इसमें आदमी को अपने **मानसिक ब्रह्माण्ड** को हल्का और छोटा करने का मौका ही नहीं मिलता। इससे उनका सूक्ष्म शरीर अचानक से बहुत ज्यादा दबाव के साथ बन जाता है। उसी दबाव के कारण वे आभासी जैसे डरावने रूप बनाते रहते हैं। यह पता नहीं कि कैसे। कईयों में अच्छे संकल्पों का दबाव ज्यादा होता है, इसलिए उन्हें **स्वर्ग** का अनुभव होता है। कईयों में बुरे संकल्पों का दबाव ज्यादा होता है इसलिए वही संकल्प **नर्क** के अनुभव के रूप में बाहर को स्फुटित होते रहते हैं। वैसे तो प्रेतात्मा अँधेरे के रूप में

रहती है। उसमें कोई संकल्प-विकल्प नहीँ होते। पर संकल्प-विकल्प उसमें **आत्मा के अँधेरे** के रूप में छिपे होते हैं। आदमी जब ऐसी आत्मा के सम्पर्क में आता है, तो वे छुपे हुए संकल्प उसके मन में जिन्दा होने लगते हैं। वे इतना ज्यादा शक्तिशाली हो सकते हैं कि वे उसे असली भौतिक रूप में भी दिख सकते हैं। इसे ही **भूत** दिखना कहते हैं। भूत का मतलब ही भूतकाल है। मतलब यह पुराने समय में हुआ है, अभी नहीँ है। इसीलिए **भूतिया फिल्मों** में आदमी की भूत बनी जीवात्मा की जीवित समय की मार्मिक घटना भूत बनकर डराते हुई दिखाई जाती है। यदि किसी का ऐसे काल्पनिक भूत से सामना हो जाए तो कहते हैं कि उससे बात नहीँ करनी चाहिए। क्योंकि क्या पता **करतबी दिमाग़** झूठमूठ में ही क्या डरावना नजारा दिखा दे, जिससे **हर्टफेल** ही हो जाए। दिमाग़ के करतब का एक अन्य उदाहरण है, मरते हुए आदमी को ले जाने काले **यमराज का काले भैंसे पर** बैठकर आना। यह **शास्त्रों** में भी लिखा है और यह एक वैश्विक अनुभव भी है, मतलब किसी देश या **धर्म** तक सीमित नहीँ है। दरअसल उस समय ऐसी मानसिक अवस्था होती है कि दिमाग़ वैसा काल्पनिक दृश्य रच लेता है जो असली जैसा लगता है। भौतिक रूप से कहीं कोई भैंसा-वैँसा नहीं आता। एकबार मुझे एक जीवंत सपने में एक काला भैंसा पहाड़ी की चोटी की तरफ घने अँधेरे जंगल से होकर ले गया। वह अंधेरा **दिव्य व आनंदमय** था, किसी महान आदमी या **संत** के सूक्ष्मशरीर की तरह। वह भैंसा मुझे बीच रास्ते में छोड़कर भाग गया। फिर मैं ऊपर चढ़ते हुए उस अकेली व मध्यम ऊँचाई की पहाड़ी की चोटी पर पहुंच गया। **अलौकिक दृश्य** था। दो या तीन मंजिला दिव्य कुटिया थी। दिव्य व **चाँद या मौमबत्ती** जैसी रौशनी थी, फिर भी चकाचक। जब मैं दूसरी मंजिल के खुले आँगन या टेरेस में बाहर निकला, तो वहाँ एक **दिव्य साधु**बाबा थे। मेरी लिखी पुस्तक उनके हाथ में थी और खुशी से मुस्कुराते हुए कह रहे थे कि उन्हें डाक आदि से मिली और वे मेरा ही इंतजार कर रहे थे। उन्होंने मेरा प्रेमभाव से भरा दिव्य सम्मान किया। जल्दी ही स्वप्न टूटा और मैं उस दिव्य अहसास से बाहर हो गया। इसका वर्णन मैंने इस वैबसाईट के अबाउट पेज पर भी किया है।

भटकी आत्मा के संबंध में मैं एक घटना सुनाता हूँ। मैं एक सुंदर पहाड़ी पर बने ढाबे में कभीकभार लंच करने जाया करता था। उसमें वेज-ननवेज हर किस्म का खाना बनता था। सुनने में आया कि एकबार रात को कुछ बदमाश ग्राहकों ने शराब के नशे में बिल को लेकर कहासुनी के बाद ढाबामालिक के बाप के ऊपर जबरदस्ती गाड़ी चढ़ा दी और फरार हो गए। अचानक, एकदम और दर्दनाक **मृत्यु** हुई थी, इसलिए वह **अकालमृत्यु** हुई। उसके बाद जब भी मैं उस ढाबे में जाता था, मुझे वहां अजीब सी एनर्जी महसूस होती थी। साथ में हर बार मेरे संबंधियों के साथ कोई न कोई अशुभ वाकया होता-होता टल जाता था। सम्भवतः मुझे कुण्डलिनी बचा लेती थी, पर कुण्डलिनी योग न करने के कारण कमजोर मन वाले संबंधी पर वह असर डालती थी। सम्भवतः कुण्डलिनी का कुछ असर उन तक भी पहुंच जाता था। उसके बाद मैंने वहाँ जाना बिल्कुल बंद कर दिया। साधारण **धार्मिक कृत्य** तो सभी कराते हैं, पर विशेष मृत्यु के बाद वे विशेष व शक्तिशाली होने चाहिए, ताकि दिवंगत आत्मा को शांति मिले। इसी तरह मैं एक बार परिचित के घर में सोया था। रात को मैंने देखा कि छत से जलती हुई लकड़ियाँ मेरे ऊपर गिर रही हैं। मैं चिल्लाया भी। फिर मैंने **गुरु** और कुण्डलिनी का ध्यान किया। इससे वह **भूतिया दृश्य** हट गया और मुझे नींद आ गई। वहाँ पर ऐसी भूतिया घटनाओं और अकालमृत्यु का पुराना इतिहास रहा था। संक्षेप में प्रत्यक्षदर्शियों द्वारा सुनी घटनाएं कहूँ तो एक व्यक्ति को रात को पानी पर तैरती ज्योतियां दिखती थीं, जो जलती और बुझती थीं। उस पानी में एक नजदीकी प्रेतग्रस्त परिवार ने प्रेत को गिट्टीयों में बांधकर दबा रखा था। शायद पत्थरों के छोटे टुकड़ों या ऐसे **यन्त्रों** को गिट्टी कहा गया है। एक मित्र को आधी रात को सुनसान सड़क के पास खेलते बच्चे दिखे जो छोटे-बड़े हो रहे थे। एक मित्र को प्रेतबाधा से ग्रस्त मकान में रात को दरवाजा खटखटाने की आवाज आती, दरवाजा खोलने पर लगता कि कुछ अंदर भागता हुआ किसी छेद वगैरह से कुछ वस्तुओं की आवाज के साथ बाहर निकल गया, पर दिखता कुछ नहीँ था। मेरे पूर्व के एक सज्जन व भोले पड़ोसी को एक **तांत्रिक** ने यह कह कर रात को अकेले **श्मशान या कब्रगाह** में जाने को इसलिए कह दिया

कि उससे उसका खतरे में पड़ा व्यापार सुरक्षित बचेगा। सुबह वह वहाँ मृत मिला। रिपोर्ट से पता चला कि उसका **हर्ट फेल** हुआ। पर मेरे दादा इतने बहादुर होते थे कि अक्सर कहते थे कि श्मशान में अकेले आराम से सो सकते हैं। बस ऊपर से ओढ़ने के लिए एक चादर चाहिए। उनके अंदर बहुत **कुण्डलिनी** बल था। **हनुमान चालीसा** को भूत भगाने में सर्वोत्तम माना जाता है। मुझे भी लगता है कि हनुमान चालीसा एकदम से कुण्डलिनी शक्ति और **कुण्डलिनी चित्र** को मजबूती के साथ क्रियाशील कर देता है। हाँ, वही **भगवान हनुमान** इस चालीसा के माध्यम से शक्ति देते हैं, जिसे **बाघेश्वर धाम सरकार वाले पंडित धीरेन्द्र** शास्त्री ने सिद्ध किया हुआ है, और जिससे वे बहुत से **चमत्कार** दिखाते हैं। मुझे सबसे रोमांचकारी, नकली या ढोंगी गुरुओं से बचाने वाली और **पारिवारिक प्रेम** को उजागर करने वाली यह बात लगी कि उनके **दादा ही उनके धर्मगुरु** हैं। बहुत से तथाकथित **जादूगर, सैकुलर और विधर्मी** लोग उनका पर्दाफाश करने सामने आए, पर सफल न हो सके। आजकल यह एक **गर्म चर्चा** का विषय बना हुआ है।

फिर कहते हैं कि **ब्लैक होल** चमकते सितारों को अपनी तरफ खींच कर निगल लेते हैं। मतलब वे मृत्युरूप होते हैं। सूक्ष्मशरीर भी तो मृत्युरूप ही होता है। जीवन उसके चारों तरफ घूमता है। वह जीवन के केंद्र में होता है, और बढ़ती आयु के साथ जीवन को अपनी ओर ज्यादा से ज्यादा खींचता जाता है। अंत में जीवन उसमें गिरकर खत्म हो जाता है। आदमी का सूक्ष्मशरीर उसके जीवन की हरेक गतिविधि पर अपना नियंत्रण रखता है। कहते हैं कि वे **संस्कार** सूक्ष्मशरीर अर्थात **सबकोन्सियस माइंड** अर्थात **अवचेतन मन** में ही रहते हैं, जो आदमी के व्यवहार को प्रभावित करते हैं। उसी तरह ब्लैक होल भी अपने से जुड़े सभी ग्रहों, सितारों और अन्य **आकाशीय पिंडों** को अपने नियंत्रण में रखकर उन्हें अपने चारों तरफ घुमाता रहता है। इसी तरह डार्क एनर्जी और **डार्क मेटर** भी पूरे ब्रह्माण्ड का संतुलन बना कर रखते हैं। फिर कहते हैं कि एक ब्लैक होल अपने पितृ तारे को तो निगलता ही हैं, पर दूसरे अन्य अनगिनत तारों को भी निगलते हैं। महान आत्मा जैसे कि किसी महान **नेता, खिलाड़ी** या अन्य किसी महान **कलाकार** का सूक्ष्म शरीर भी तो

उनके अनगिनत फॉलोवर को अपनी तरफ खींचता है। उनकी मृत्यु से उनके पिछलग्गू कई दिन मातम व मायूसी के माहौल में रहते हैं, कई **आत्महत्या** कर लेते हैं, और कई दंगे फैलाकर **जिनोसाइड** अर्थात **सामूहिक नरसंहार** को अंजाम देते हैं। बेशक वे सभी एक बड़े ब्लैकहोल में समा जाते हैं, पर उनकी पृथक सत्ता भी रहती ही है।

कुण्डलिनीयोगानुसार क्वांटम एन्टेंगलड पार्टिकल्स डार्क मैटर से आपस में ऐसे ही जुड़े होते हैं जैसे दो प्रेमी सूक्ष्मशरीर से आपस में जुड़े होते हैं

दोस्तों, **सूक्ष्मशरीर** से सम्पर्क अक्सर होता रहता है। जिससे प्रेमपूर्ण संबंध हो, उसके सूक्ष्मशरीर से सम्पर्क जुड़ा होता है। इसी तरह जिसके सूक्ष्मशरीर से सम्पर्क जुड़ा होता है, उससे प्यार भी होता है। खाली स्थूलशरीर से प्यार नहीं हो सकता। **सऊलमेट** को ही देख लो। उनको ऐसा लगता है कि वे एकदूसरे की **मिरर इमेज़** हैं। बेशक उनकी शक्ल आपस में न मिलती हो, पर उनके मन आपस में बहुत ज्यादा मेल खाते हैं। उनमें एक लड़का होता है, और एक लड़की। बेशक **यौन आकर्षण** भी उन्हें एकदूसरे के नजदीक लाते हैं, पर इससे एकदूसरे से नजदीकी से रूबरू ही हो सकते हैं, इससे **प्यार** पैदा नहीँ किया जा सकता। तभी तो आपने देखा होगा कि आदमी सेक्स से संतुष्ट ही नहीं होता। यदि **सम्भोग** में प्यार पैदा करने की शक्ति होती तो आदमी का कभी **तलाक** न हुआ करता, आदमी एक से ज्यादा शादियां न करता, और न ही एक से ज्यादा महिलाओं से यौनसंबंध बनाता। मुझे लगता है कि सेकसुअल सम्पर्क एक निरीक्षण अभियान है, जिससे आदमी नजदीक जाकर यह पता लगाता है कि उसे अमुक से प्यार है कि नहीँ। यह अलग बात है कि कई लोग इस सर्वे में इतना गहरा घुस जाते हैं कि बाहर ही नहीं निकल पाते और मजबूरी में वहीं रहकर समझौता कर लेते हैं। कइयों को लगता होगा कि मैं विरोधी बातें करता हूँ। मैं ओपन माइंड रहना पसंद करता हूँ, किसी भी विशेष सोच से चिपके रहना नहीं। कई जगह मैंने कहा है कि संभोग में प्यार को पैदा करने की शक्ति है। यह भी सही है, पर शर्त लागू होती है। इसके लिए काफी समय, प्रयास व संसाधनों की आवश्यकता होती है। जब बना बनाया खाना मिलने की उम्मीद हो, तो खुद क्यों बनाना भाई।

गहरे स्त्रीपुरुष प्यार में सूक्ष्मशरीर बेशक आपस में जुड़े हों, पर वे एकदूसरे से बदले नहीँ जा सकते। गहरे प्यार में एकदूसरे से टेलीपेथीक सम्पर्क बन जाता है, एकदूसरे की सोच और जीवन एकदूसरे को प्रभावित करने लगते हैं। अगर एक पार्टनर कुछ सोचे तो दूसरे के साथ वैसा ही होने लगता है, बेशक वह कितना ही दूर क्यों न हो। मतलब साफ है कि वे एकदूसरे के सूक्ष्मशरीर से प्रभावित होते हैं। पर पता नहीँ क्यों तीसरे सूक्ष्मशरीर के अखाड़े में प्रवेश करने से सभी परेशान होने लगते हैं। हाहा। इससे यह भी सिद्ध होता है कि सूक्ष्मशरीर **अनंत आकाश** की तरह **सर्वव्यापी** है। एकबार मेरे **विश्वविद्यालय** के मित्र के पिता का देहावसान हुआ था। उनसे मैं कई बार प्रेमपूर्ण माहौल में मिला भी था। वह मुझसे सैंकड़ों किलोमीटर दूर थे। मुझे कुछ पता नहीँ था। उसी रात मुझे नींद में अपने पिता की मृत्यु की जीवंत तस्वीर दिखी थी। मैं उसकी वजह नहीँ समझ पा रहा था। अगले दिन जब मुझे खबर मिली तब बात समझ में आई। उस दौरान मैं गहन **तांत्रिक कुण्डलिनी योग** अभ्यास करता था, संभवतः उससे ही इतना जीवंत महसूस हुआ हो। लगता है कि **क्वांटम एन्टेंगलमेंट** भी यही है। दोनों एन्टेंगलड क्वांटम पार्टिकल्स आपस में सूक्ष्मशरीर जैसी चीज से जुड़े हो सकते हैं। यह तो जाहिर ही है कि दृश्य **ब्रह्माण्ड** के आधार में **डार्क मैटर** और **डार्क एनर्जी** से भरा **अनंत अंतरिक्ष** होता है। यह भी पता है कि वही दृश्य जगत के रूप में उभरता है, उसी के नियंत्रण में रहता है, और नष्ट होने पर वही बनकर उसी में समा जाता है। इसका मतलब है कि डार्क मेटर और दृश्य जगत केवल आपस में बारबार रूप बदलता रहता है, कभी न तो कुछ नया बनता है, और न ही बना हुआ नष्ट होता है। यह दुनिया पहले भी हनेशा थी, आज भी है, और आगे भी हमेशा रहेगी। इसमें रोल प्ले करने वाले नए-नए **कलाकार** आते रहेंगे, और मुक्तिरूपी परमानेंट नेपथ्य में जाते रहेंगे। एन्टेंगलड क्वांटम पार्टिकल्स का सूक्ष्मशरीर एक ही होता है। वह सूक्ष्म शरीर उन पार्टिकल्स का डार्क मेटर है, जिससे वे बने हैं। इसीलिए जब एक पार्टिकल से छेड़छाड़ होती है, तो वह दूसरे को भी उसी समय प्रभावित करती है, बेशक वे दोनों एकदूसरे से कितनी ही दूरी पर क्यों न हो, बेशक एक कण **गेलेक्सी** के एक छोर पर हो और दूसरा

दूसरे छोर पर। इसका मतलब है कि हरेक **फंडामेन्टल पार्टिकल** का अपना अलग डार्क मेटर है, जो अनंत अंतरिक्ष में फैला होकर अनंत अंतरिक्षरूप ही है। इसी तरह जैसे हरेक जीव एक अलग अनंत अंतरिक्षरूप है, अपनी किस्म का। जैसे आदमी का हरेक क्रियाकलाप उसके सूक्ष्मशरीर में दर्ज हो जाता है, और उसीके अनुसार वह उसीके जैसा बारबार बनाता रहता है, उसी तरह हरेक **मूलकण** का हरेक क्रियाकलाप उसके डार्क मेटर में दर्ज होता रहता है। **प्रलय** के बाद जब पुनः **सृष्टि** प्रारम्भ होने का समय आता है, तब उस डार्क मेटर से पुनः वह मूलकण बन जाता है, और उसमें दर्ज सूचनाओं के अनुसार आगे से आगे सृष्टि निर्माण करने लगता है। इसी तरह से सभी मूलकणों के सहयोग से सृष्टि पुनः निर्मित हो जाती है। शास्त्रों में इसे ऐसे कहा है कि पहले **ब्रह्मा** की उत्पत्ति हुई, उनसे **प्रजापतियों** की उत्पत्ति हुई आदि-आदि। मतलब शास्त्रों में भी मूलकणों को मनुष्यों का रूप दिया गया है, क्योंकि दोनों के स्वभाव एकजैसे हैं। लगता है कि **भौतिक विज्ञान** सूक्ष्मशरीर को अलग तरीके से समझ रहा है। इसके अनुसार एन्टेंगलड क्वांटम पार्टिकल्स की **तरंग** आपस में जुड़ी होती है। वह अनंत अंतरिक्ष की दूरी तक भी आपस में जुड़ी ही रहती है।
फिर कहते हैं कि दो मूलकणों को एन्टेगल किया जा सकता है, अगर उन्हें एकदूसरे के काफी नजदीक कर दिया जाए। सम्भवतः इससे उनके डार्क मेटर आपस में एकदूसरे तक पहुंच बना लेते हैं। यह ऐसे ही है, जैसे दो नजदीकी प्रेमियों के सूक्ष्मशरीर एकदूसरे तक पहुंच बना लेते हैं, जैसा ऊपर बताया गया है।

उपरोक्त विवरण से कुछ वैज्ञानिकों और **शास्त्रों** का यह दावा भी सिद्ध हो जाता है कि **भूत, भविष्य और वर्तमान** सब आपस में जुड़े हैं, मतलब **समय** का अस्तित्व नहीं है। जो आज हो रहा है, और जो आगे होगा, वैसा ही पहले भी हुआ था, कुछ अलग नहीँ। सबकुछ पूर्वनिर्धारित है। हालांकि आदमी के **कर्म** और प्रयास का महत्त्व भी है।

कुंडलिनी योग डीएनए को सूक्ष्म शरीर और डार्क एनर्जी या डार्क मैटर के रूप में दिखाता है

सूक्ष्म शरीर पांच ज्ञानेन्द्रियों, पांच कर्मेंद्रियों, पांच प्राण, एक मन और एक बुद्धि के योग से बना है।

यह सूक्ष्मशरीर ही **परलोकगमन** करता है, हाड़मांस से बना **स्थूलशरीर** नहीं। कोई बोल सकता है कि जब स्थूल शरीर नष्ट हो गया, तब ये इन्द्रियां, प्राण आदि कैसे रह सकते हैं, क्योंकि ये सभी स्थूलशरीर के आश्रित ही तो हैं। यही तो ट्रिक है। इसे आप **लेखन** की वर्णन करने की **कला** भी कह सकते हैं। लेखक अगर चाहता तो सीधा लिख सकता था कि शरीर और उसके सारे क्रियाकलाप उसके सूक्ष्मशरीर में दर्ज हो जाते हैं। पर यह वर्णन आकर्षक और समझने में सरल न होता। क्योंकि शरीर और उसके सभी क्रियाकलाप उसके मन, बुद्धि, कर्मेंद्रियों, ज्ञानेन्द्रियों, और पांचों प्राणों के आश्रित रहते हैं, इसलिए कहा गया कि सूक्ष्मशरीर इन पांचों किस्म की चीजों से मिलकर बना है। मुझे तो ऐसा अनुभव नहीं हुआ था। मुझे तो ये चीजें सूक्ष्मशरीर में अलगअलग महसूस नहीं हुई, बल्कि एक ही अविभाजित **अंधेरा** महसूस हुआ, जिसमें इन सभी चीजों की छाप महसूस हो रही थी। मतलब साफ है कि सूक्ष्मशरीर अनुभवरूप अपनी **आत्मा** के माध्यम से ही चिंतन करता है, आत्मा से ही निश्चय करता है, आत्मा से ही काम करता है, आत्मा के माध्यम से ही सभी इन्द्रियों के अनुभव लेता है, और आत्मा से ही दैनिक जीवन के सभी शारीरिक क्रियाकलाप करता है। मतलब सूक्ष्मशरीर में **जीव** के पिछले सभी जीवन पूरी तरह से दर्ज रहते हैं, जिनको वह लगातार आत्मरूप से अपने में अनुभव करता रहता है। ये अनुभव स्थूल शरीर की तरंगों की तरह बदलते नहीं। एक प्रकार से ये पिछले सभी जन्मों का मिलाजुला औसत रूप होता है। कई लोग सोचते होंगे कि सूक्ष्मशरीर एक बिना शरीर का **मन** होता होगा, जिसमें खाली **अंतरिक्ष** में विचारों की तरंगें उठती रहती होंगी, पर फिर स्थूल और सूक्ष्म शरीर में क्या अंतर रहा। वैसे भी बिना स्थूल शरीर के आधार के स्थूल

मन का अस्तित्व संभव नहीं है। उदाहरण के लिए आप अपनी अंगूठी में जड़े हुए **हीरे** को सूक्ष्मशरीर मान लो। इसमें इसके जन्म से लेकर सभी सूचनाएं दर्ज हैं। कभी यह शुद्ध ऊर्जा था। **सृष्टि निर्माण** के साथ यह धरती पर वृक्ष बन गया। फिर **भूकंप** आदि से वृक्ष धरती के अंदर सैंकड़ो किलोमीटर नीचे दब कर कोयला बना। फिर पत्थर का कोयला बना। लाखों वर्षो तक यह भारी तापमान और दबाव झेलता रहा। इसमें अनगिनत परिवर्तन हुए। इसने अनगिनत क्रियाएं कीं। इसने अनगिनत वर्ष बिताए। फिर वह खोद कर निकाला गया। फिर तराशा गया। फिर आपने इसे खरीदा और अपनी अंगूठी में लगाया। ये सभी सूचनाएं इस हीरे में दर्ज हैं। हालांकि हीरे को देखकर हमें इन सूचनाओं का स्थूलरूप में पता नहीं चलता, पर वे सूचनाएं सूक्ष्मरूप में हमें जरूर अनुभव होती हैं, तभी हमें हीरा बहुत सुंदर, आकर्षक और कीमती लगता है। ऐसे ही किसीके सूक्ष्म शरीर के अनुभव से उसका पूरा पिछला ब्यौरा स्थूल रूप में मालूम नहीं होता, पर सूक्ष्मरूप में अनुभव होता है, उसके औसत स्वभाव को अनुभव करके। **गीता** में **योगेश्वर श्रीकृष्ण** कहते हैं कि वे **अर्जुन** के पिछले सभी जन्मों को जानते हैं। इसका मतलब यह नहीं कि उन्हें अपने मन में **दूरदर्शन** की तरह सभी दृष्य महसूस हो रहे थे, बल्कि यह मतलब है कि उन सबका निचोड़ सूक्ष्मशरीर के रूप में महसूस हो रहा था। **शास्त्रों** की शैली ही ऐसी है कि वे अक्सर तथ्यों का पूर्ण विश्लेषण न करके उन्हें **चमत्कारिक** रूप में रहने देते हैं, ताकि पाठक हतप्रभ हो जाए। ये अनुभव स्थूलशरीर से लिए अनुभवों से सूक्ष्म होते हैं, हालांकि हमें ऐसा लगता है, सूक्ष्मशरीर के लिए तो वह स्थूल अनुभव की तरह ही शक्तिशाली लगते होंगे, क्योंकि उस अवस्था में जीवित अवस्था के उन विचारों के शोर का व्यवधान नहीं होता, जो अनुभवों को कुंठित करते हैं। साथ में, पिछले सारे जन्मों का अनुभव भी आत्मा में हर समय सूक्ष्म रूप में बना रहता है, जबकि स्थूलशरीर में स्थूल विचारों के शोर में दबा रहता है। हाँ, वह नए अनुभव नहीँ ले सकता, क्योंकि उसके लिए स्थूलशरीर जरूरी होता है। इसलिए उसका आगे का विकास भी नहीँ होता। आगे के विकास के लिए ही उसे स्थूलशरीर के रूप में **पुनर्जन्म** लेना पड़ता है। मुझे तो

सूक्ष्मशरीर **डीएनए** की तरह जीव की सारी सूचनाएं दर्ज करने वाला लगता है। इसी तरह मुझे **डार्क एनर्जी** या **डार्क मैटर** भी स्थूल **ब्रह्माण्ड** का **शाश्वत डीएनए** लगता है।

डार्क एनर्जी और सूक्ष्मशरीर की समतुल्यता तभी सिद्ध हो सकती है, अगर उसे हम विभागों में न बांटकर एकमात्र अंधेरभरे आसमान की तरह मानें जिसमें इनके स्थूल रूप की सभी सूचनाएं सूक्ष्म अर्थात आत्म-अनुभवरूप में दर्ज होती हैं। कृपया इसे पूर्ण आत्मानुभव अर्थात **आत्मज्ञान** न समझ लिया जाए। यह आत्म-अनुभव की सर्वोच्च अवस्था है, जो एक ही किस्म का होता है, और जिसमें कोई सूचना दर्ज नहीँ होती मतलब शुद्ध आत्म-रूप होता है, जबकि सूक्ष्मशरीर वाला आत्म-अनुभव बहुत हल्के दर्जे का होता है, और उसमें दर्ज गुप्त सूचनाओं के अनुसार असंख्य प्रकार का होता है। यह "**यत्पिंडे तत् ब्रह्मान्डे**" के अनुसार ही होगा।

कुण्डलिनी योग आनंदमय कोष के साथ शरीर के सभी कोषों को एकसाथ खोलता है

शास्त्रों के अनुसार हमारी स्थूल देह का नाम **अन्नमय कोष** है, जो कि **मृत्यु** के साथ ही समाप्त हो जाता है। शरीर में स्थित पांच वायु और पांच **कर्मेन्द्रियों** के समूह को **प्राणमय कोष** कहते हैं। मन सहित पांचों **ज्ञानेनिद्रियों** के समूह को **मनोमय कोष** कहा गया है। बुद्धितत्व युक्त पांचोँ ज्ञानेंद्रियों के समूह को **विज्ञानमय कोष** कहते हैं। सबसे भीतरी और सूक्ष्म कोष **आनंदमय कोष** है, वह **सत्वगुणी अविद्या** से संचालित है। परन्तु **आत्मा** इन सब से अछूती है। इसका थोड़ा विश्लेषण करते हैं। स्थूल शरीर मतलब अन्नमय कोष तो सबके प्रत्यक्ष है ही। कर्मेन्द्रियों को प्राणमय कोष में इसलिए लिया गया है, क्योंकि प्राणों का सबसे पहले स्पष्ट प्रभाव कर्म-इन्द्रियों पर ही नजर आता है। **कुण्डलिनी योग** के दौरान जब प्राण को विशेष **चक्र** पर केंद्रित करते हैं, तो वहाँ सिकुड़न जैसी हलचल होती है, और उससे जुड़ी कर्मेन्द्रियों को शक्ति मिलती है। तभी तो **व्यायाम**, **खेल**, दौड़ व भारी काम से सांस तेज चलती है, जिससे कर्मेन्द्रियों को प्राणों का संचार बढ़ता है। मानसिक काम से वैसी साँस नहीँ फूलती, इसलिए इसे मनोमय कोष में रखा गया है। **दूरदर्शन** देखते और सुनते समय साँस नहीँ फूलती। किसी भोजन को सूंघते और चखते हुए या उसको स्पर्श करते हुए भी साँस नहीँ फूलती। इसीलिए त्वचा, आँख, कान, नाक और जिव्हा पांचोँ को ज्ञानेंद्रियों में रखा गया है। मतलब ये कर्मप्रधान की अपेक्षा ज्ञानप्रधान हैं। कर्म तो इनसे भी होता है। जननेन्द्रिय को भी कर्मेन्द्रिय में रखा गया है, क्योंकि इसके प्रयोग से भी साँस फूलती है। गुदा इन्द्रिय को भी कर्मप्रधान कर्मेन्द्रियों के साथ रखा गया है। पांचोँ ज्ञानेंन्द्रियों को मन के साथ इसलिए मनोमय कोष में रखा जाता है, क्योंकि इनसे संवेदनाओं के अनुभव से मन क्रियाशील हो जाता है। सुंदर दृश्य देखने से या सुंदर **संगीत** सुनने से मन में सुंदर विचार आते हैं। विचारों को साधारण ज्ञान कह सकते हैं। विशेष ज्ञान **बुद्धि** के

सहयोग से ही पैदा होता है। जैसे **कार के शोरूम** में बहुत से साधारण विचार आते हैं। आदमी जब बुद्धि से कार खरीदने का निर्णय लेता है, तो उसकी खरीद से जुड़े विचार ज्यादा ताकतवर, प्रभावशाली, व्यावहारिक और कर्मप्रेरक होते हैं। 'वि' मतलब विशेष, इसलिए विज्ञान मतलब विशेष ज्ञान। इससे आनंद पैदा होता है। कार का मालिक बन कर किसको आनंद नहीं होता। वह आनंदमय कोष से महसूस होता है। दरअसल आनंद बिना लहरों की शुद्ध आत्मा में महसूस होता है। विज्ञान और कर्म की ताकतवर व्यक्त लहरों से सूक्ष्मशरीर में ताकतवर छाप पड़ती है। उस छाप को ही सत्त्वगुणी अविद्या कहा गया है। मतलब कार खरीदने की क्रिया को आप सत्त्वगुणप्रधान कह लो, क्योंकि यह काम आराम से, आनंद से, तसल्ली से, **इंसानियत** से और **शिष्टाचार** से होता है। इसलिए इससे जो छाप **सूक्ष्मशरीर** अर्थात अविद्या अर्थात विशेष अँधेरे पर पड़ती है, वह भी वैसी ही होती है। सीमित समय के लिए ही इस छाप का प्रभाव शेष अनंत सूक्ष्मशरीर के मुकाबले ज्यादा होती है, क्योंकि यह छाप ताज़ा होती है, बाद में तो यह सूक्ष्मशरीर में मौजूद अनगिनत छापों में घुलमिलकर उनकी तरह साधारण बन जाती है। इसीलिए **भौतिकता** से मिला आनंद हमेशा के लिए नहीं रहता। दूसरे उदाहरण के लिए आप कल्पना करो कि आप परिवार व किसी अच्छे रिश्तेदार के साथ सुंदर कार से पहुंच कर किसी सुंदर **रिसोर्ट** में बैठे हैं। बाहर **लॉन** में आरामदायक कुर्सी पर धूप सेंक रहे हैं। सामने कांच के गोल टेबल पर पीने के लिए शुद्ध जल है। और भी खाने-पीने के लिए आर्डर पर एकदम मिल जाता है। नजदीक में आपका परिवार आनंद से टहल रहा है। बच्चे सामने पार्क में खेल रहे हैं। सामने ही स्विमिंग पूल है। आप लंबी और धीमी सांस लेते हुए सुस्ता रहे हैं। आपको अपनी आत्मा के अँधेरे में बहुत बढ़िया आनंद महसूस होगा। है तो वह आम अँधेरे की तरह ही जिसे अविद्या कहा गया है, पर वह अन्य सामान्य अंधेरों के विपरीत आनंद से भरा होगा। यह इसलिए क्योंकि यह अंधेरा स्वयं की **सत्ता** और **अस्तित्व** से भरा होगा। यह **सत्त्वगुणी अंधेरा** है। मतलब सत्ता बढ़ाने वाली सारी सुविधाएं आपको सामने उपलब्ध हैं, पर आप अविद्या में आनंद का मजा ले रहे हैं। आदमी

की सुखसुविधा भोगने की भी सीमा है। उससे थकने के बाद सत्त्वगुणी अविद्या से ही आनंद मिलता है। दरअसल आनंद का स्रोत सत्त्वगुणी अविद्या ही है, सीधे तौर पर सुखसुविधा नहीं। अविद्या मतलब विद्या या ज्ञान का निषेध है। इसलिए यह अज्ञान का अंधेरा ही है। आपको सत्त्वगुणी अविद्या का एक और उदाहरण देता हूँ। मानलो आप ऐसी जगह पर हैं, जहाँ से एक तरफ मैदानी क्षेत्र शुरु होता है। आपके सामने दूसरी तरफ पर्वतमाला दिख रही है। आपको उस मिश्रित जैसे मैदानी भाग में शुद्ध मैदानी भाग से भी ज्यादा आनंद आएगा, क्योंकि सामने का दुर्गम व कठिनाइयों से भरा पर्वत आप की सत्ता को सापेक्ष रूप से वास्तविक सत्ता से भी ज्यादा बढ़ा हुआ महसूस कराएगा। ऐसी ही एक जगह है आनंदपुर। सम्भवतः इसी विशेष आनंद के कारण इसका यह नाम पड़ा है। यहाँ पर **सिख धर्म** का प्रसिद्ध **गुरुद्वारा आनंदपुर साहब** स्थित है। सत्त्वगुणी अविद्या के विपरीत जो अंधेरा **गुस्से**, **डर, अभाव, चिंता** आदि के साथ पैदा होता है, उसमें आनंद नहीं होता। इनमें अविद्या का अंधेरा **स्व-अस्तित्व** के विरुद्ध होता है। एक ही अंधेरा अलगअलग परिस्थितियों में अलगअलग ढंग से महसूस होता है। यह रोचक **मनोविज्ञान** है।आनंदमय कोष से भी एक कदम ज्यादा गहराई में पूर्ण शुद्ध आत्मा है। इसके साथ आनंद जैसा कोई शब्द नहीं जुड़ा है, क्योंकि यह **अनिर्वचनीय** है, आनंद से भी ऊपर। अधिकांश लोग आनंदमय कोष के **ब्लिस या आनंद** को शुद्ध आत्मा जानकर उससे मोहित हुए रहते हैं, और **आत्मजागृति** के लिए विशेष प्रयास नहीं करते। शुद्ध आत्मा में स्थूल जगत की कोई छाप नहीं होती। इसलिए यह अपने मूलरूप में पूर्ण प्रकाशमान होता है। दरअसल **प्रकाश** शब्द भी लौकिक है, आत्मा इससे भी परे होता है। इसीलिए आत्मा को सबसे अप्रभावित अर्थात अछूता कहा गया है।

सभी कोष बारीबारी से और क्रमवार ही अच्छे खुलते हैं, जैसे किसी महल के सुरक्षा घेरे लांघे जाते हैं। **बचपन** में खाने-पीने से अन्नमय कोष विकसित होकर खुल जाता है। खेलकूद, व्यायाम और विभिन्न कामों को सीखने से प्राणमय कोष विकसित होकर खुल जाता है। फिर **माध्यमिक विद्यालय** स्तर की ऊँची कक्षाओं में पहुंच कर वह जटिल व विशेष विषय वाली शिक्षा को

ग्रहण करते हुए मनोमय कोष को खोलता है। महाविद्यालय या **विश्वविद्यालय** स्तर पर **तकनीकी** और व्यावहारिक शिक्षा लेकर वह विज्ञानमय कोष को खोलता है। फिर **नौकरी या व्यापार** करते हुए वह धन कमाने लगता है, और विज्ञानमय कोष की सहायता से आनंदमय कोष को खोलता है। उसको भी पूरा विकसित करके वह **तांत्रिक** कुण्डलिनी योग की तरफ खुद ही आकर्षित होकर उससे आत्मा तक पहुंचने का प्रयास करता है।
कुण्डलिनी योग से वैसे सभी कोष एकसाथ भी खुल सकते हैं। योगासन व प्राणायाम से भूख लगती है, और शरीर स्वस्थ रहता है। इससे अन्नमय कोष खुला रहता है। **प्राणायाम** से प्राणमय कोष खुला रहता है। प्राणमय कोष खुलने से मनोमय कोष खुलता है। फिर चक्रों पर कुण्डलिनी ध्यान से विज्ञानमय कोष खुल जाता है। विज्ञानमय कोष खुलने से आनंदमय कोष खुद ही खुल जाता है। अंत में कुण्डलिनी जागृत होने से आदमी आत्मा तक भी पहुंच जाता है।
आनंदमय कोष को लाँघने का आसान तरीका बताता हूँ। आराम से धूप में कुर्सी पर बैठें। पूरे शरीर को देखते हुए उसका ध्यान करें। इससे अन्नमय कोष खुलेगा। **निद्रा देवी** का ध्यान करके और **नींद शब्द** का मानसिक उच्चारण करते हुए मस्तिष्क को ढीला व तनावरहित कर दें। **गहरी साँस** आएगी। उस पर ध्यान दें। धीमी और गहरी सांसें चलने लगेंगी। उससे प्राणमय कोष खुलेगा। उससे मन में पुरानी यादों के साथ अन्य विचार जागेंगे। इससे मनोमय कोष खुलेगा। फिर बुद्धि से निश्चय करके उन पर **साक्षीभाव** रखते हुए शरीर पर, सांसों पर और निद्रा पर ध्यान जारी रखेंगे। इससे विज्ञानमय कोष जागेगा। थोड़ी देर में विचार आत्मा में विलीन हो जाएंगे। इससे मन में **विचारशून्यता** का अंधेरा जैसा महसूस होगा। इसे सत्त्वगुणी अविद्या कहेंगे। यह इसलिए क्योंकि यह जानबूझकर पवित्र **सत्त्वगुण** से पैदा की गई। यह रजोगुणी अविद्या की तरह लड़ाई-झगड़े या जीवन के रोजाना के संघर्ष से पैदा नहीं हुई। न ही यह नशे, आमिष आदि से पैदा **तमोगुण** से पैदा हुई। सत्त्वगुणी अँधेरे से आनंद महसूस होने से आनंदमय कोष भी खुल जाएगा। लगभग एक घंटे में यह पूरी साधना हो जाएगी। आनंदमय कोष के खुले होने

पर यदि आदमी लगभग एक-दो घंटे तक तांत्रिक कुण्डलिनीयोग का अभ्यास भी करता रहे, तो कुण्डलिनी **जागरण** के रूप में आत्मा की तरफ भी बढ़ता रहेगा।

मृत्यु अटल सत्य है। पर मरना किसीके लिए **कला** है, तो किसी के लिए **किस्मत** है। कोई सतोगुणी अविद्या के माध्यम से **सुख** और आनंद से मरता है, तो किसी को मजबूरन रजोगुणी और तमोगुणी अविद्या के पाले पड़कर बहुत **दुःख** और कष्ट के साथ मरना पड़ता है।

कुण्डलिनीयोग एक अध्यात्मवैज्ञानिक मशीन के रूप में

मनोमय शरीर भी आदमी खुद ही होता है। वह कोई और नहीं होता। वह बहुत विस्तृत होता। जब उसे अपने आप के रूप में अनुभव किया जाता है, तब वह क्षीण होने लगता है, और कुण्डलिनी छवि का रूप लेने लगता है। खालीपन, हल्कापन और आनंद सा भी महसूस होता है। इसी तरह, दरअसल **ज्ञान** आत्मा का होता है। पर **विज्ञान** मतलब विशेष ज्ञान तब होता है, जब आत्मा के साथ मन मतलब मनोमय शरीर भी जुड़ जाता है। **मन आत्मा का ही विशेष रूप है।** इसलिए मन का ज्ञान जब आत्मा के विशेष ज्ञान के रूप में किया जाता है, तब यही **विज्ञानमय कोष** है। मन का साधारण व पराई वस्तु के रूप में ज्ञान तो मनोमय कोष है। पर जब उसे ही अपना रूप समझा जाता है, तब यही विज्ञानमय कोष है। यह भी शरीर से जुड़ा हमारा ही भाग या कोष है, पर लगता है जैसे बाहर अनंत दिशाओं और दूरियों में फैला है। **दरअसल आदमी एक उड़ती हुई पतंग की तरह है। मन उड़ने वाला रंगीन कागज है, इसके शरीर से जुड़े होने की भावना डोर है, और शरीर उस डोर को पकड़ने वाला है। जब तक डोर है, तभी तक पतंग सलामत है, नहीं तो भटक कर नष्ट हो जाएगी।** एक जगह मैंने बस के डेशबोर्ड पर लिखा हुआ पढ़ा था कि मन एक पैराशूट की तरह है, यह तभी अच्छे से काम करता है, जब यह खुला हुआ होता है। शायद इसका भी यही अर्थ है। शास्त्रों में इसे ऐसे कहा है कि मन को दृष्य रूप न समझकर द्रष्टा रूप समझना है। **साक्षीभाव** भी यही है, बल्कि इसका ही हल्का और आसान तरीका है। जब आत्मा मन को चुपचाप साक्षी बनकर देखता है, तब भी मन की **ध्यान छवि** अभिव्यक्त होने लगती है। इससे भी यही सिद्ध होता है कि मन आत्मा का ही विशेष रूप है, मतलब मन विज्ञान रूप है। मन तभी तक है, जब तक इसे बाहरी या पराया समझा जाए। जब इसे अपना आत्मरूप समझा जाता है, तब यह हल्का पड़ने लगता है। घर की मुर्गी दाल बराबर। महत्त्वबुद्धि बाहरी

या पराई चीज के लिए होती है, अपनी चीज या अपने लिए नहीं। इसमें मन नष्ट नहीँ होता, बल्कि महत्त्वहीन सा होकर धीमा पड़ जाता है। इससे आनंद पैदा होता है। पहले की भटकी हुई अवस्था में मन ने जो अतिरिक्त शक्ति ली हुई थी, वह कुण्डलिनी छवि को मिल जाती है। इससे आनंद में और इजाफा होता है, क्योंकि कुण्डलिनी छवि लम्बे समय तक बने रहकर बिना आदमी के दार्शनिक प्रयास के खुद ही भटकते मन की अतिरिक्त चर्बी उतारकर चूसती रहती है, जिससे आनंद लम्बे समय तक, और पहुंचे हुए कुण्डलिनी योगियों में तो स्थायी ही बना रहता है। मन की हल्की वृत्ति **सत्त्वगुणरूप** है। इसलिए मन के क्षीण होने से जो मनमिश्रित अंधेरा जैसा पैदा होता है, उसे **सतोगुणी अविद्या** कहते हैं, जैसा पिछली पोस्ट में बताया गया था। इसी से इसमें आनंद होता है। यही **आनंदमय कोष** है। इसके विपरीत मन का बिल्कुल नष्ट होना **तमोगुणरूप** है, और मन का पूरे वेग में होने से उसका वास्तविक जैसा लगना **रजोगुणरूप** है। इनके साथ जुड़ा अविद्यारूपी अंधेरा क्रमशः **तमोगुणी अविद्या** और **रजोगुणी अविद्या** है। पहली अवस्था में **दुःख** और दूसरी अवस्था में **सुख** होता है, आनंद नहीँ। सुख और दुःख एकदूसरे से जिन्दा रहते हैं। आनंद सुख व दुःख से परे है, और हमेशा एक जैसा बना रहता है। आनंद को सुख और दुःख का मिश्रित रूप भी कह सकते हैं, क्योंकि इसमें मन और अंधेरा दोनों बराबर संतुलन में एकसाथ रहते हैं। रजोगुण में मन बहुत भड़कीला होता है, जिसके साथ अंधेरा बिल्कुल नहीँ रहता, इसलिए यह सुख है। जब मन थककर बैठ जाता है, तब पूरी तरह से बेजान सा हो जाता है, जिससे मस्तिष्क में घुप्प अंधेरा छा जाता है। यह दुःख है। यही घोर तमोगुण भी है। सुख और दुःख का चक्र चलता रहता है, जिससे आत्मा की सफाई नहीं होती। मुझे अपनी प्रारम्भिक पुस्तक के समय इसका इतना गहरा विश्लेषण पता नहीं था, हालांकि ऐसा व्यावहारिक अनुभव जरूर था। उसमें मैंने इसे ऐसे लिखा है कि **अनासक्ति** से ही आनंद पैदा होता है। बात सही भी है। अनासक्ति से मन धीमे और **संतुलित** चलता है। वैसे **आसक्ति** औरों के प्रति ही होती है, अपने प्रति नहीँ। इसलिए मन को आत्मा समझने से अनासक्ति खुद पैदा होती है। मैंने अनासक्ति सिद्धांत के

बहुत से उदाहरण दिए थे। जैसे कि आनंद **मदिरा** से नहीं बल्कि उससे मन के धीमा होने से होता है, जो अनासक्ति व सत्त्वगुण का लक्षण है। इसी तरह आनंद **मांसभक्षण** से नहीं बल्कि उससे उत्पन्न जीवन के प्रति नश्वर बुद्धि से पैदा **वैराग्य** से उत्पन्न अनासक्ति से पैदा होता है। ऐसे बहुत से उदाहरण दिए थे।

कुण्डलिनी योग से यही प्रभाव पैदा होता है। अनासक्ति अर्थात **अद्वैत** और कुण्डलिनी साथसाथ रहते हैं। इसलिए कुण्डलीनियोग से **कुण्डलिनी छवि** के मन में रहने पर आनंद पैदा होता है। अतः कुण्डलीनियोग एक अध्यात्मवैज्ञानिक मशीन या **तकनीक या ट्रिक** की तरह है, जो अनासक्ति के **दार्शनिक** झमेले से बचाते हुए स्वचालित रूप से अनासक्ति का प्रभाव पैदा करता है। इसका उदाहरण मैं अपने से देता हूँ। मैंने बहुत पैसा खर्च करके कुछ विकासात्मक काम किए थे। पर कुछ अटल कारणों से उनमें से कुछ चीजें छूट गईं और कुछ में घाटा हुआ। मुझे पछतावा भी हुआ और नहीं भी, क्योंकि चलना ही जीवन है। जब आदमी बाहर नजर घुमाए रखता है तब वह अपनी चीज से संतुष्ट नहीँ होता। उससे उसका अपना आनंद भी गायब हो जाता है। मैं डिस्टर्ब सा रहने लगा। मैंने कहीं से कुण्डलिनी योग सीखा और सोचा कि सब ठीक हो जाएगा। योग से मेरा खोया हुआ आनंद लौट आया, वह भी सूद समेत। मैंने आध्यात्मिक उन्नति भी बहुत की। उस समय तो इसके आधारभूत मनोवैज्ञानिक सिद्धांत का पता नहीं था, पर आज इसका पता चला है। **कुण्डलिनी एक चमत्कारिक मानसिक ध्यान छवि** है, जो एक स्वचालित यंत्र की तरह हर प्रकार से लाभ करती है। हुआ क्या कि कुण्डलिनी ने मेरे भटके हुए मन की शक्ति हर ली। इससे कुण्डलिनी की सहायता से अनायास ही मेरा मनोमय कोष विज्ञानमय कोष में बदल गया। विज्ञानमय कोष आनंदमय कोष में तब्दील हो गया। उक्त विकासात्मक दुनियादारी से मेरे प्रारम्भिक तीनों कोष बहुत विकसित हो गए थे। वैसे तो अद्वैत की सहायता से विज्ञानमय कोष और आनंदमय कोष को भी मैं इनके साथ विकसित कर रहा था, पर अंतिम दो कोशोँ को **रॉकेट गति** कुण्डलिनी

योग से ही मिली जिससे **कुण्डलिनी जागरण** की तथाकथित मामुली सी झलक भी मिली थी।

कुछ लेखक अनुमोदित साहित्यिक पुस्तकें-

1) **Love story of a Yogi- what Patanjali says**
2) **Kundalini demystified- what Premyogi vajra says**
3) **कुण्डलिनी विज्ञान- एक आध्यात्मिक मनोविज्ञान (पुस्तक 1,2,3 और 4)**
4) **The art of self publishing and website creation**
5) **स्वयंप्रकाशन व वैबसाईट निर्माण की कला**
6) **कुण्डलिनी रहस्योद्घाटित- प्रेमयोगी वज्र क्या कहता है**
7) **बहुतकनीकी जैविक खेती एवं वर्षाजल संग्रहण के मूलभूत आधारस्तम्भ- एक खुशहाल एवं विकासशील गाँव की कहानी, एक पर्यावरणप्रेमी योगी की जुबानी**
8) **ई-रीडर पर मेरी कुण्डलिनी वैबसाईट**
9) **My kundalini website on e-reader**
10) **शरीरविज्ञान दर्शन- एक आधुनिक कुण्डलिनी तंत्र (एक योगी की प्रेमकथा)**
11) **श्रीकृष्णाज्ञाभिनन्दनम**
12) **सोलन की सर्वहित साधना**
13) **योगोपनिषदों में राजयोग**
14) **क्षेत्रपति बीजेश्वर महादेव**
15) **देवभूमि सोलन**
16) **मौलिक व्यक्तित्व के प्रेरक सूत्र**
17) **बघाटेश्वरी माँ शूलिनी**
18) **म्हारा बघाट**
19) **भाव सुमन: एक आधुनिक काव्यसुधा सरस**
20) **Kundalini science~a spiritual psychology (books 1,2,3, and 4)**

इन उपरोक्त पुस्तकों का वर्णन एमाजोन, ऑथर सेन्ट्रल, ऑथर पेज, प्रेमयोगी वज्र पर उपलब्ध है। इन पुस्तकों का वर्णन उनकी निजी वैबसाईट https://demystifyingkundalini.com/shop/ के वैबपेज "शॉप (लाईब्रेरी)" पर भी उपलब्ध है। साप्ताहिक रूप से नई पोस्ट (विशेषतः कुण्डलिनी से सम्बंधित) प्राप्त करने और नियमित संपर्क में बने रहने के लिए कृपया इस वैबसाईट,"https://demystifyingkundalini.com/" को निःशुल्क रूप में फोलो करें/इसकी सदस्यता लें।

सर्वत्रं शुभमस्तु